राष्ट्रीय नदी का गौरव लौटाने को लेकर राज, समाज व संतों के नजरिये
और गंगा नदी घाटी प्राधिकरण से जनापेक्षाओं से परिचय कराता दस्तावेज

गंगा जनादेश

राजेन्द्र सिंह

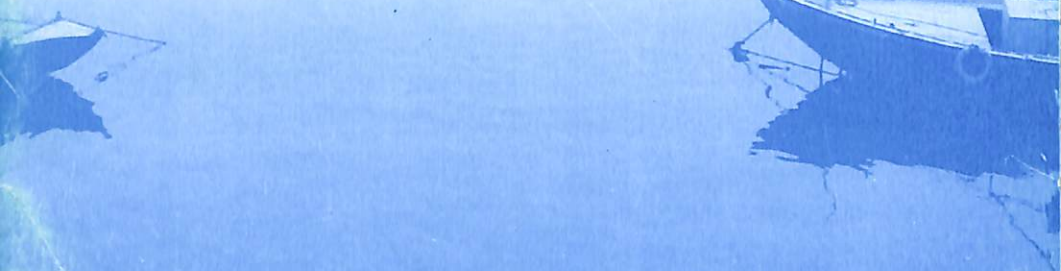

॥ कहहु सुनहु करहु अब सोई * जइसे गंङ्ग पुनि सुरसरि होई ॥

गंगा सेवा अभियान के प्रेरक एवं मार्गदर्शक

जगद्गुरु शङ्कराचार्य, ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं द्वारकाशारदापीठाधीश्वर

स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज

सादर समर्पित

गंगा जनादेश

लेखक
राजेन्द्र सिंह

संपादक
प्रो. जी.डी. अग्रवाल, परितोष त्यागी
प्रो. मनोहर सिंह राठौड़, राधा भट्ट
डा. वी.पी. सिंह, अरुण तिवारी

सहयोगी
देवयानी कुलकर्णी, विनोद कुमार

प्रकाशक
तरुण भारत संघ
भीकमपुरा किशोरी वाया थानागाजी
अलवर (राजस्थान)-301022

वितरक
गंगा सेवा अभियान-जलबिरादरी
34/46 किरणपथ, मानसरोवर
जयपुर-302020
watermantbs@yahoo.com
jalpurushtbs@gmail.com
0141-2393178, 01465-225043

सहयोग राशि
60/- रुपये

प्रथम संस्करण
गंगा दशहरा, 2009

मुद्रक
कुमार एण्ड कम्पनी, जयपुर

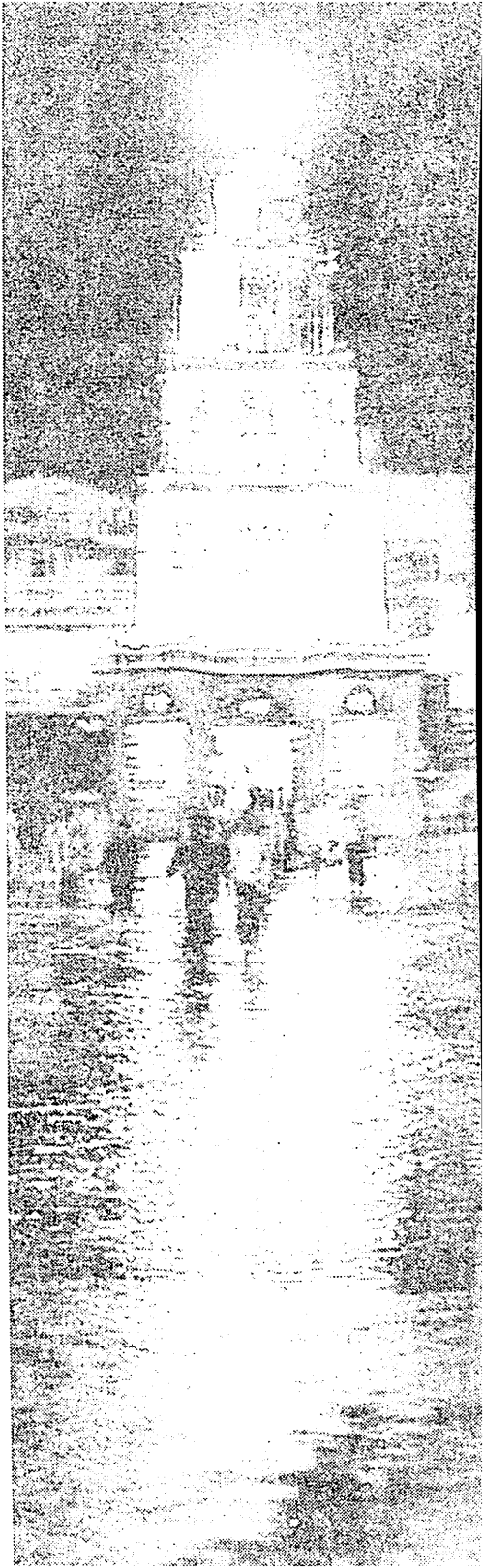

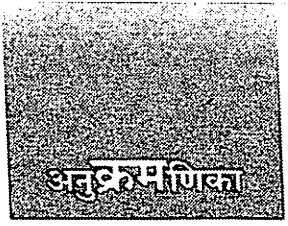

गंगा निवेदन	**3**
ऐतिहासिक दिवस	**10**
यूं घोषित हुई गंगा राष्ट्रीय नदी	11
गंगा सेवा अभियान	18
राष्ट्रीय नदी होने का मतलब ?	**21**
राष्ट्रीय नदी के समक्ष चुनौतियां	**25**
ऊर्जा की खातिर बांध	26
ग्लोबल वार्मिंग	40
बाढ़ नियंत्रण	49
नदी भूमि अतिक्रमण	54
अनियंत्रित प्रदूषण	56
भूजल शोषण	63
जनजुड़ाव का अभाव	65
कैसे लौटे राष्ट्रीय नदी का गौरव?	**67**
धर्मसत्ता का आदेश	68
रास्ता दिखाता समाज	73
संत निभायें भूमिका	78
गंगा जनादेश	80
संलग्नक	**88**

गंगा निवेदन

मुझे याद है कि गंगा सेवा अभियान का प्रतिनिधिमंडल 16 अक्टूबर, 2008 को माननीय प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह जी से मिला था। जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द जी ने गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग करते हुए प्रधानमंत्री जी से कहा था - "आप राष्ट्र के कल्याण हेतु यह कदम उठायें, गंगा मां आपका कल्याण करेगी।" प्रधानमंत्री जी ने 4 नवम्बर, 2008 को गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित कर गंगा का सम्मान बचाने की दिशा में एक बड़ी पहल की; तो 16 मई 2009 के चुनावी नतीजे ने यू.पी.ए. गठबंधन का सम्मान बढ़ा दिया। आशीष फलीभूत हुआ।

25 वर्ष पहले जब तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी जी ने मैली गंगा को शुद्ध और सदानीरा बनाने का संकल्प जताते हुए गंगा कार्ययोजना की शुरुआत की थी, तब भी भारत की जनता ने उन्हें भारी बहुमत से जिताकर शुक्रिया अदा किया था। दूसरी तरफ उत्तराखण्ड में जिस पार्टी की सरकार ने ऊर्जाखंड के नाम पर गंगा और दूसरी नदियों को बांधों और सुरंगों में कैद करने की हिमाकत की, जनता ने उत्तराखण्ड में उस पार्टी को एक भी सीट पर जीतने नहीं दिया। आपको याद होगा कि नदी और प्रकृति के विपरीत व्यवहार वाली नदी जोड़ परियोजना को जिस गठबंधन की सरकार ने मंजूरी दी थी, जनता ने उसे भी नकार दिया था।

इन सभी जनादेशों को सामने रखें, तो साफ हो जाता है कि गंगा के प्रति भारतीय जनास्था गहरी है और वह उसकी इस आस्था का सम्मान करने वाले को सिर-आंखों पर बिठाना जानती है। "मैं उस देश का वासी हूं, जिस देश में गंगा में बहती है।"..... इस गीत का गौरव आखिर कौन हासिल करना नहीं चाहता!

संभवतः संप्रग प्रमुख श्रीमती सोनिया गांधी जी ने भी नहीं सोचा होगा कि गंगा के प्रति आस्था जताने का उनके गठबंधन की सरकार को इतना बड़ा

उपहार मिलेगा। लेकिन जनता को इसीलिए जर्नादन कहा गया है कि वह सब कुछ जानती है।

दरअसल जब लम्बे अरसे से उपेक्षित गंगा को राष्ट्रीय नदी का गौरव देने का संकल्प जताया गया; गंगा नदी घाटी प्राधिकरण बना, प्राधिकरण में जनभागीदारी सुनिश्चित करने के लिए सामाजिक प्रतिनिधियों की सदस्यता को मंजूरी दी गई; गंगा को उसके मूल में ही सुरंगों में कैद कर उसकी हत्या करने की कोशिश में लगी परियोजनाओं का काम केन्द्र सरकार द्वारा रोका गया, गंगा संरक्षण को पहली बार चुनावी घोषणापत्र का हिस्सा बनाया..... जनता इस अच्छी मंशा को चुपचाप देखते रही और मौका आने पर अपना आभार प्रकट कर दिया।

अब भारत की नई सरकार पर पहले से ज्यादा बड़ी जिम्मेदारी है कि वह जनता के इस विश्वास की रक्षा करें। कहीं ऐसा न हो कि जिस प्रकार गंगा कार्य योजना श्री राजीव गांधी जी के अच्छे सपने और संकल्प पर खरी नहीं उतरी,उसी प्रकार गंगा के प्रति संप्रग सरकार का संकल्प भी अधूरा ही रह जाये।

जनता ने तो अपना आभार प्रकट कर दिया, लेकिन अब भारत की नई सरकार पर पहले से ज्यादा बड़ी जिम्मेदारी है कि वह जनता के इस विश्वास की रक्षा करे। कहीं ऐसा न हो कि जिस प्रकार गंगा कार्ययोजना श्री राजीव गांधी जी के अच्छे सपने और संकल्प पर खरी नहीं उतरी, उसी प्रकार गंगा के प्रति संप्रग सरकार का संकल्प भी अधूरा ही रह जाये। यह काम कठिन जरूर है, लेकिन असंभव नहीं।

देश और दुनिया में नदियों के पुनर्जीवन के कई ताजा उदाहरण मौजूद हैं। यदि राज और समाज... दोनों दृढ़ संकल्प के साथ एक-दूसरे से सहयोगी भाव से जुड़ जायें, तो कुछ भी असंभव नहीं।

भारत और भारत के पारंपरिक ज्ञान में यह कौशल मौजूद है। गंगा कार्ययोजना की विफलता पारंपरिक ज्ञान व कौशल से अरवरी जैसी नदियों के पुनर्जीवन तथा

लगभग देश के हर इलाके में मौजूद जल संरक्षण की सफल कहानियां से सबक लेने की जरूरत है। कभी कुंभ के मेले में देश की नदियों के लिए न्याय-संगत नीतियां बनती थीं। इन नीतियों में नदियों में अतिक्रमण निषेध था। गंगा नदी बाढ़ के सर्वोच्च बिन्दु से तीन सौ गज दूर तक हल चलाना भी वर्जित माना जाता था। नदी की धारा को रोकने अथवा मोड़ने को प्रकृति विपरीत कार्य मानकर उसे कठोर दंड देने का प्रावधान था।

किसी ने मुझसे पूछा - ''क्या स्नान से भी नदी गंदी होती है ?' मैंने कहा - ''नहीं। लेकिन अब लोग नदियों में स्नान करने नहीं....., वे तो पाप धोने आते हैं और हमारे शास्त्रों ने गंगा में पाप धोने की छूट कभी नहीं दी है।''

उल्लेखनीय है कि गंगा स्नान के लिए सदियों से एक मर्यादा तय है। हमारे यहां मल-मूत्र के त्याग के पश्चात् पवित्र मन और संयम से ही गंगा स्नान की अनुमति थी। यह नियम बिना बाधा हर उम्र और वर्ग पर लागू होता था। हमारे शास्त्रों एवं समाज ने गंगा स्नान को एक पुण्य का काम माना है। पता नहीं, कैसे और कब इसे लोगों ने अपने पाप धोने का प्रयोजन बना लिया।

जिसमें सभी का शुभ हो, वही तो पुण्य कार्य होता है। इसके विपरीत पापकर्म तो केवल निज लाभ के लिए ही होते हैं। यही एक वजह है कि निजी स्वार्थवश होकर हम अपनी पवित्र जीवनदायिनी गंगा को अपने पाप धोने वाली नदी मान बैठे हैं। इससे हमारी गंगा की जीवनदायिनी शक्ति नष्ट होती जा रही है। जीवन देने वाली नदियां जीवन लेने वाली साबित हो रही हैं।

हम सभी साझे और शुभ की अवधारणाओं को भूलकर निजी स्वार्थों को प्राथमिकता बनाने में लगे हैं। हम जैसे भूल ही गये हैं कि नदियां हमारा साझा भविष्य हैं।

लम्बे अरसे से यह लगने लगा था कि जैसे समाज और सरकार दोनों ने सोच लिया है कि नदियां तो बर्बाद होंगी ही, पानी का संकट तो आयेगा ही। ..... वे इसमें कुछ नहीं कर सकते। लेकिन किसी एक कोने से छोटी सी पहल हुई..... छुटपुट प्रयासों ने साझा किया। पिछले कई वर्षों से गंगा की

अविरलता और पवित्रता बनाये रखने के उद्देश्य से समाज आधारित आंदोलन चल रहे हैं। जगद्गुरु शंकराचार्य शारदापीठम् की प्रेरणा, पर्यावरण विशेषज्ञ प्रो. जी. डी. अग्रवाल के आमरण अनशन, जलबिरादरी जैसे संगठनों के सतत प्रयास, मातृ सदन, हरिद्वार सहित अनेक साधु-संतों द्वारा गंगा को बचाने और नदी की धारा को अविरल बहाने देने के उद्देश्य से अपने प्राणों की बाजी लगाने की घटनाएं समाज और सरकार में गंगा और जल के प्रति संवेदना को पुनर्जीवित करने में सफल रही हैं।

इसी का नतीजा है कि देश की सबसे बड़ी अदालत ने 28 अप्रैल, 2009 को एक फैसले में भारत सरकार को कहा कि यदि वह सभी को पानी पिला नहीं सकती, तो सरकार भी नहीं चला सकती। जाहिर है कि सरकार चलाने का हक उसे ही है, जो सभी को पानी पिला सके। न्यायपालिका ने जीवन के अधिकार की व्याख्या में पानी के अधिकार को शामिल माना। यह भी कहा कि इस अधिकार की रक्षा के लिए अनुकूल स्थितियां बनाना शासन की जिम्मेदारी है।

इस बीच उत्तराखण्ड हाईकोर्ट ने गंगा मार्ग में जल विद्युत परियोजनाओं के रूप में खड़े अवरोधों पर पूरी संवेदना और गंभीरता दिखाते हुए 18 मई, 2009 को न्यायालय ने परियोजना रोक के खिलाफ पूर्व में दिए गए अपने ही स्थगनादेश को वापस ले लिया है। उसने कंपनी द्वारा मांगी गई अंतिम राहत को भी नकार दिया है। इस तरह समाज और न्यायपालिका दोनों ने नदी-पानी के मसलों को पूरी संवेदना के साथ निभाने का दायित्व अब सरकार के कंधों पर डाल दिया है।

आज भारत के जनमानस ने गंगा का सम्मान करने वालों का सम्मान किया है और न्यायपालिका चिंतित है तो इसका मतलब साफ है कि लोग गंगा को शुद्ध-सदानीरा बनाने की दिशा में भले ही कुछ न कर रहे हों, किंतु उनकी यह चाहत जरूर है। लेकिन अब सिर्फ चाहत से काम चलने वाला नहीं; हम में से प्रत्येक को अपनी राष्ट्रीय नदी का गौरव लौटाने की दिशा में अपने-अपने स्तर पर जमीनी और व्यावहारिक पहल तथा भागीदारी सुनिश्चित करनी होगी। किसी राष्ट्रीय नदी का मतलब भी यही है कि उसकी अविरलता, पवित्रता,

स्वच्छता और मूल स्वरूप को वापस लौटाया जाये। यदि हम ऐसा नहीं कर सके, तो यह राष्ट्रीय नदी का अपमान होगा।

सुखद है कि गंगा मूल में लोहारी नागपाला से न्यूनतम 16 क्यूमैक्स पानी छोड़ने तथा भागीरथी पर भविष्य में किसी परियोजना को हाथ में नहीं लेने का निर्णय कर केन्द्र की सरकार ने गंगा को कैद से मुक्ति का रास्ता खोल दिया है। इसे मिसाल मानकर हमारी सभी सरकारों को चाहिए कि वे अपने-अपने राज्य की नदियों को कैद से मुक्त करें। नदी भूमि पर हो रहे अतिक्रमण रोकें। उनकी स्वच्छता और पवित्रता को जरूरी मानकर व्यावहारिक कदम उठायें। चंद मेगावाट अथवा भूमि बाजार के लालच की पूर्ति हेतु मां सरीखी नदियों को भला कोई कैद कैसे रख सकता है! प्राधिकरण को चाहिए कि अब वह पूरे सोच-विचार और जनभागीदारी के साथ गंगा की समृद्धि के कार्य में जुट जाये। टाइगर रिजर्व की तर्ज पर गंगा संरक्षित क्षेत्र घोषित करे। गंगा के तट को हल चलाने हेतु निषेध की पारंपरिक नीति की तर्ज पर नदी क्षेत्र को अतिक्रमण मुक्त बनाने की नीति बनाये। गंगा और उसकी सहायक नदियों में आने वाले प्रदूषण को नदी मे मिलने से पहले ही रोकने का ढांचा बने।

गंगा की संतानें गंगा की समृद्धि में भारत की समृद्धि का रास्ता देख रही हैं। सरकार को चाहिए कि भारत के आर्थिक सुधारों को लागू करते वक्त इस दृष्टि व जनाकांक्षा को अनदेखा न करे। जगद्गुरु स्वामी स्वरूपानन्द जी द्वारा गठित गंगा ज्ञान आयोग के विद्वानों ने सरकार से तत्काल कार्रवाई हेतु जो 18+7 सूत्री निवेदन प्रस्तुत किया है; प्राधिकरण उसे तत्काल प्रभाव से लागू करे। गंगा संरक्षण हेतु जो अच्छे नियम-कायदे पहले से लागू हैं, उन्हें व्यवहार में लाया जाये। गंगा प्राधिकरण सिर्फ नाम का प्राधिकरण न हो, वह काम का प्राधिकरण बने। इसका कार्य साल में सिर्फ दो बैठकें करने तक

गंगा की संतानें गंगा की समृद्धि में भारत की समृद्धि का रास्ता देख रही हैं। सरकार को चाहिए कि भारत के आर्थिक सुधारों को लागू करते वक्त इस दृष्टि व जनाकांक्षा को अनदेखा न करे।

गंगा प्राधिकरण सिर्फ नाम का प्राधिकरण न हो, वह काम का प्राधिकरण बने। इसका कार्य साल में सिर्फ दो बैठके करने तक सीमित न रह जाये। यह बड़े बदलाव का सूत्रधार बने।

सीमित न रह जाये। यह बड़े बदलाव का सूत्रधार बने। नदियों के बाढ़-सुखाड़ नियंत्रण के लिए बांध, नदियों की कीमत पर ऊर्जाखंड बनाने तथा नदियों को नालों में तब्दील करने की जो बेसमझी जानबूझकर लम्बे अरसे से हमारे देश में दोहराई जा रही है।..... उसके पीछे छिपे कारणों को अच्छी तरह से समझकर सही निदान हेतु नीतिगत निर्णय किये जायें।

सच्चाई यही है कि भारत गंगा-जमुनी संस्कृति का देश है। नदियों की समृद्धि से ही देश में आर्थिक, प्राकृतिक और सांस्कृतिक समृद्धि आयेगी... गर्माते ब्रह्माण्ड और बिगड़ते मौसम के मिजाज के साथ-साथ भारतीय लोकतंत्र का मिजाज भी ठीक होगा। मैं समझता हूं कि अब हर मतदाता की अपेक्षा है कि सरकार गंगा के प्रति अपने लिखित संकल्प को पूरा करने में जुटे। संकल्प को पूरा करने के लिए जिन आधारभूत निर्णयों और कदमों की अपेक्षा गंगा की संतानें सरकार से कर रही हैं, उन सभी को इस पुस्तक में संजोया गया है। इसके लिए गंगा सेवा अभियान एक नहीं, कई बार गंगा के पूरे प्रवाह क्षेत्र में गया। इन यात्राओं के जरिए हमने लोगों की संवेदनाओं और अपेक्षाओं को समझा है तथा गंगा के जानकार विद्वानों से चर्चा की है।

इस पुस्तक को लिखने में प्रो.जी.डी. अग्रवाल और श्री भरत झुनझुनवाला की बातचीत व लेखों से प्राप्त जानकारी भी शामिल है। गंगा ज्ञान आयोग के विद्वान सदस्य सर्वश्री परितोष त्यागी, एस.के. गुप्ता और रवि चोपड़ा ने तथ्यों को दुरुस्त किया है। बहन राधा भट्ट और डा. विजय वर्मा ऐसी पुस्तक चाहते थे जो कि गंगा और समाज की सेहत का जोड़ समझाती हो। आपके सुझाव भी इसमें शामिल किये गये हैं। श्री अरुण तिवारी ने शब्दों को चुना है।

यह पुस्तक पूरे भारतीय समाज की है.... किसी एक धर्म, जाति या वर्ग की नहीं। इसमें धर्मसत्ता की चारों पीठों के पूज्य शंकराचार्यों के प्रेरणा संदेशों को दिया

गया है। इनके बिना यह पुस्तक अधूरी सी लगती। माननीय शंकराचार्यों ने गंगा के विषय में जो कहा है, वे सब अमृतवाणी हैं। इस अमृतवाणी का पान कर गंगा और भारतीय समाज दोनों जीवित रह सकेंगे। गंगा सेवा अभियान के मार्गदर्शन एवं सक्रियता में शंकराचार्य श्री स्वरूपानन्द सरस्वती, शंकराचार्य श्री भारती तीर्थमू,शंकराचार्य श्री निश्चलानन्द, स्वामी श्री निर्विकल्पानन्द जी, स्वामी श्री अविमुक्तेश्वरानन्द जी, श्री आनन्दगिरी जी और स्वामी श्री शिवानन्द सरस्वती जी की भूमिका हम नहीं भुला सकते। इनके बिना गंगा को पुनः मां का सम्मान देने वाली प्रक्रिया शुरू ही नहीं होती; गंगा राष्ट्रीय नदी घोषित ही नहीं होती। राजसत्ता ने धर्मसत्ता का मान रखा। इसके लिए हम सयुंक्त प्रगतिशील गठबंधन के भी आभारी हैं। प्रधानमंत्री कार्यालय के मंत्री तथा ऊर्जा मंत्री ने जिस तरह सहयोग कर गंगा मूल में चल रहे बांध निर्माण के काम को रोका, इसके लिए हम उनके आभारी हैं। सबसे बढ़कर तो प्रो. जी.डी. अग्रवाल ज़ी के आभारी हैं, जिन्होंने गंगा संरक्षण के लिए अपने जीवन को तुच्छ माना। जिनकी प्रेरणा और हिम्मत से हममें लक्ष्य के प्रति विश्वास जगा। सभी संसद सदस्यों को गंगा कलश भेंट करके गंगा हित में काम करने का संकल्प पत्र प्राप्त करने का काम जारी है। अब गंगा बचाने के लिए सब अपनी-अपनी शक्ति से सक्रिय हैं।

दरअसल गंगा के प्रति संवेदना और संरक्षण की प्रक्रिया के इस सात वर्षीय दौर में हमें इतने परिचित-अपरिचित लोगों का सहयोग मिला कि यदि उनकी सूची बनानी शुरू की जाये, तो ही एक छोटी पुस्तक बन जायेगी। ऐसे तमाम साथियों का नाम लिख पाना यहां संभव नहीं, लेकिन मेरे हृदय पटल पर उन सभी के चित्र अंकित हैं। मैं उन्हें भला कैसे भूला सकता हूं। हर अच्छे काम में अंततः सफलता मिलती ही है..... इस बात का भरोसा ऐसे ही लोगों के कारण तो आज हमारे भीतर बचा हुआ है। संतोष है कि गंगा किनारे भागते-दौड़ते जो कुछ मिला..... इस पुस्तक के रूप में आप तक पहुंचा रहा हूं। इस उम्मीद के साथ कि गंगा के साथ एक दिन पूर्ण न्याय होगा और गंगा मां का अशीष हम सभी को मिलेगा।

राजेन्द्र सिंह

संयोजक, गंगा सेवा अभियान

4 नवम्बर, 2008
गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने और गंगा नदी घाटी प्राधिकरण के गठन का फैसला।

ऐतिहासिक दिवस

20 फरवरी, 2009
वन एवम् पर्यावरण मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय नदी संबंधी अधिसूचना जारी

देखें संलग्नक 1 एवम् 2

यूं घोषित हुई गंगा राष्ट्रीय नदी

सफ़रनामा

23 दिसम्बर, 2002- श्री राजेन्द्र सिंह के नेतृत्व में जलबिरादरी द्वारा राजघाट, नई दिल्ली से गंगा समेत देश की 144 नदियों की राष्ट्रीय जलयात्रा का शुभारम्भ।

12 मार्च, 2003 - श्री अफसर हुसैन जाफरी के समन्वयन और उत्तराखण्ड जलबिरादरी के अध्यक्ष श्री शमशेर सिंह बिष्ट के नेतृत्व में गंगा यात्रा शुरू। प्रमुख भागीदार : श्री सुन्दरलाल बहुगुणा, डा. वन्दना शिवा, बहन राधा भट्ट, श्री राजेन्द्र सिंह, श्री रवि चोपड़ा और श्री सुरेश भाई।

1 अगस्त, 2007: गंगा की प्रमुख सहायक नदी यमुना पर दिल्ली में खेलगांव व मेट्रो के प्रस्तावित अतिक्रमण के खिलाफ श्री राजेन्द्र सिंह द्वारा यमुना सत्याग्रह का आह्वान।

8 जुलाई, 2007: उत्तराखण्ड की कोसी, रामगंगा, सरयू और गोमती के जलप्रवाह में चिंताजनक घटोत्तरी तथा भागीरथी, यमुना, अलकनन्दा, मन्दाकिनी व सरयू पर सुरंग व बांधों के खिलाफ उत्तराखण्ड की जलबिरादरी एकजुट। अलकनन्दा घाटी में सुरंगों के ऊपर चाईं गांव के धंसान व भागीरथी घाटी के चिरांग गांव में आई दरारों से चेते ग्रामीण व पानी कार्यकर्ताओं द्वारा 'उत्तराखण्ड नदी बचाओ वर्ष-2008' की घोषणा। कुमाऊं तथा गढ़वाल मण्डल में पदयात्रा।

2 अक्तूबर, 2007 - जलबिरादरी द्वारा वर्ष 2008 को 'नदी संरक्षण सत्याग्रह वर्ष' के रूप में मनाने का निर्णय। नदी संरक्षण हेतु बांडी-लूणी, अडियार, कूवम, अकरावती, वैधवती, गार्वी तथा गंगा व गंगा की प्रमुख सहायक संवेदनशील नदियों..... यमुना, सरयू, हिण्डन, सई, गोमती, बादस, सोनभद्र और दामोदर आदि पर सघन कार्यक्रम की घोषणा। जलबिरादरी द्वारा प्रतिवर्ष 20 मार्च को जलाधिकार दिवस तथा भारतीय पंचांग के अनुसार गंगा दशहरा तिथि को नदी दिवस के रूप में मनाने का निर्णय।

9 जनवरी, 2008 - उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा प्रस्तावित गंगा एक्सप्रेस-वे के खिलाफ जलबिरादरी द्वारा नोएडा से बलिया तक सात सदस्यीय गंगा एक्सप्रेस-वे अध्ययन यात्रा। नेतृत्व : श्री रामधीरज, सदस्य : श्री अरविन्द कुशवाह, ईश्वरचन्द्र, सत्येन्द्र सिंह, अरुण तिवारी, विनोद कुमार व राकेश सिंह।

27 जनवरी, 2008 - जलबिरादरी द्वारा गंगा एक्सप्रेस-वे के खिलाफ उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री व माननीय राज्यपाल को ज्ञापन।

11 फरवरी, 2008 - बसंतपंचमी की इस तिथि को जलबिरादरी के प्रमुख अगुवा संगठन तरुण भारत संघ के उपाध्यक्ष और सुविख्यात पर्यावरणविद् प्रो. जी.डी.अग्रवाल द्वारा सरकार को चेतावनी - ''यदि गंगा की मूलधारा भागीरथी का गोमुख से लेकर उत्तरकाशी तक अविरल प्रवाह सुनिश्चित नहीं किया गया, तो मैं 13 जून, 2008 को गंगा दशहरे के दिन उत्तरकाशी में आमरण अनशन शुरू करूंगा।''

14 अप्रैल, 2008 - प्रो. अग्रवाल द्वारा संकल्प - ''मैं संकल्प करता हूं कि कोई अनहोनी ही न घट जाये तो मैं उत्तरकाशी तक भागीरथी गंगा जी की धारा को अविरल-निर्बाध रखे जाने के हित में गंगादशहरा 13 जून, 2008 से ''आमरण अनशन'' करूंगा; प्रभु मुझे अपने संकल्प पर दृढ़ रहने की शक्ति दे।''

11 जून, 2008 - उत्तराखण्ड सरकार के मुख्यमंत्री श्री भुवनचन्द्र खंडूरी द्वारा प्रो. जी.डी. अग्रवाल की चेतावनी को नजरअंदाज करते हुए गंगा दशहरा से ठीक दो दिन पहले गंगोत्री और उत्तरकाशी के बीच एक और जलविद्युत परियोजना का उद्घाटन।

13 जून, 2008 - 'भागीरथी बचाओ संकल्प' के बैनर तले उत्तरकाशी के कर्णिमणिका घाट पर प्रो. जी.डी. अग्रवाल का आमरण अनशन शुरू। अन्य मुख्य अनशनकारी : जलबिरादरी के प्रमुख कार्यकर्ता प्रो. एस. प्रकाश और अरुण कुमार 'पानी बाबा'। भागीरथी बचाओ संकल्प की आयोजन समिति के सदस्य : जस्टिस पी.एन. भगवती, मैग्सेसे सम्मानित श्री एम.सी. मेहता, श्री राजेन्द्र सिंह, डा. रवि चोपड़ा, डा. उत्तम स्वरूप और प्रिया पटेल। गांधी शांति प्रतिष्ठान की अध्यक्षा राधा भट्ट, उत्तराखण्ड नदी आंदोलन के प्रमुख नेता सुन्दरलाल बहुगुणा, विमला बहन, सुरेश भाई, नामी राजनीतिज्ञ व विचारक गोविन्दाचार्य के अलावा तरुण भारत संघ, जलबिरादरी, लोकविज्ञान संस्थान, एन्वायरोटेक तथा कई अन्य सामाजिक-धार्मिक संगठनों के महत्वपूर्ण लोगों ने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।

इसी दिन वाराणसी में गुरु दण्डीस्वामी द्वारा गंगा के संरक्षण को लेकर आमरण अनशन शुरू।

प्रो. जी. डी. अग्रवाल के गंगा के प्रति संकल्प के समर्थन में समस्त प्रदेशों की जलबिरादरी इकाइयों द्वारा अपनी-अपनी स्थानीय नदी के किनारे उपवास किया। संबंधित प्रदेश सरकारों को ज्ञापन सौंपा। सबसे पहले प्रातः नौ बजे जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने फोन पर अपना समर्थन व हर स्थिति में साथ देने का संकल्प जताया। उनकी पहल के बाद स्वामी चिदानन्द सरस्वती समेत देश के प्रमुख संतों ने समर्थन संदेश भेजकर ताकत बढ़ाई। विश्व हिन्दू परिषद ने स्वामी रामदेव की अध्यक्षता में 'गंगा रक्षा मंच' के गठन की घोषणा की।

19 जून, 2008 - प्रो. जी.डी. अग्रवाल के अनशन की धमक तथा उनके समर्थन में एकजुट संगठनों के कारण आगे स्थिति बिगड़ने की आशंका को भांपकर उत्तराखण्ड सरकार ने उत्तराखण्ड जलविद्युत निगम द्वारा प्रस्तावित 381 मेगावाट की भैरव घाटी परियोजना 480 मेगावाट की पाला मनेरी परियोजना का काम तत्काल प्रभाव से रोकने का निर्णय लिया।

इससे बौखलाकर संबंधित जलविद्युत कंपनी के गुण्डों ने अनशन स्थल पर पहुंचकर अनशनकारियों का सामान नदी में फेंका और स्वामी परिपूर्णानन्द सरस्वती जी पर हमला भी किया।

22 जून, 2008 - जलबिरादरी ने उत्तरकाशी में जनसभा कर अपना विरोध दर्ज कराया। प्रो. जी.डी. अग्रवाल ने मांग क्षेत्र में केन्द्र सरकार की इकाई- एन.टी.पी.सी. द्वारा निर्मित तीसरी परियोजना लोहारी नागपाला (600 मेगावाट) को रोकने के लिए आगे का संघर्ष दिल्ली में केन्द्र सरकार के समक्ष करने का निर्णय लिया।

23 जून, 2008 - उत्तराखण्ड सरकार ने परियोजनाओं को रोकने की बात कही थी... रद्द करने की नहीं। इससे असंतुष्ट जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वती जी की प्रेरणा से स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती जी ने

हरिद्वार में 'गंगा सेवा अभियान' के गठन की घोषणा की। श्री राजेन्द्र सिंह को उसके संयोजन की जिम्मेदारी दी गई। गंगा सेवा अभियान की पहल पर इसी दिन से हर की पौड़ी पर स्वामी परिपूर्णानन्द सरस्वती और प्रेमदत्त नौटियाल ने आमरण अनशन शुरू कर दिया। इन अनशन की प्रमुख शर्त के तौर पर देश में पहली बार गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग उठी।

23 जून, 2008 - इसी दिन प्रो. जी.डी. अग्रवाल द्वारा दिल्ली में अनशन शुरू।

केन्द्र सरकार द्वारा भागीरथी के मूल प्रवाह पर जलविद्युत परियोजना के प्रभाव की जांच तथा प्रवाह की जीवंतता सुनिश्चित करने हेतु प्रो. जी.डी. अग्रवाल की सदस्यता के साथ एक उच्च स्तरीय समिति गठित करने का फैसला।

29 जून, 2008 - गंगा सेवा अभियान के तहत देश की सप्त मोक्षपुरियों में गंगा अनशन शुरू।

12 जुलाई 2008 - देश के सभी ज्योतिर्लिंगों में गंगा सेवा अभियान द्वारा गंगा सभाओं का आयोजन कर समर्थन जुटाने की कोशिश। देशभर से राष्ट्रीय नदी की मांग तेज।

28, 29, 30 जुलाई, 2008 : बाल भवन परिसर और यमुना सत्याग्रह स्थल, नई दिल्ली में जलबिरादरी द्वारा नदी संरक्षण सत्याग्रह सम्मेलन का आयोजन। गंगा को राष्ट्रीय नदी की मांग को मिला बड़ा समर्थन। गायत्री परिवार, दिल्ली सिख गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, मेवात से इस्लाम व दिल्ली से चर्च के प्रतिनिधियों ने आकर दिखाई मांग के प्रति एकजुटता।

अन्य प्रमुख भागीदार : स्वामी श्री शिवानन्द सरस्वती (हरिद्वार), प्रो.जी.डी.अग्रवाल (चित्रकूट), श्रीमती सविता सिंह (गांधी स्मृति एवं दर्शन समिति), नई दिल्ली, श्री रमेश शर्मा, (गांधी शांति प्रतिष्ठान), श्रीमती मधु भादुड़ी (भारतीय विदेश सेवा), पद्मश्री श्रीमती संतोष यादव (प्रख्यात पर्वतारोही), श्रीमती शांताशीला नायर (सचिव ग्रामीण पेयजल, भारत सरकार), प्रो.एस.प्रकाश (हिण्डन), प्रो. एम.एस. राठौड़ (विकास अध्ययन

संस्थान, जयपुर), अरुण कुमार पानी बाबा, वरिष्ठ पत्रकार मधुकिश्वर, अरविन्द कुमार सिंह, एस. राजू एवं दिनेश कुमार।

अगस्त, 2008 - जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने तथा गंगा को उसका गौरव लौटाने के लिए पांच कदम उठाने की अपेक्षा की।

5, 6 सितम्बर, 2008 - करौली जिले में राजीव गांधी फाउंडेशन व जलबिरादरी के सहयोग से तरुण भारत संघ द्वारा आयोजित खिजूरा जलकुंभ में पुनः उठी गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग।

12 सितम्बर, 2008 - जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी महाराज ने भागीरथी के मूल प्रवाह को जीवन्त बनाये रखने के लिए गठित उच्चस्तरीय विशेषज्ञ समिति के प्रति अनास्था जताते हुए प्रधानमंत्री को पत्र लिखकर गंगा ज्ञान आयोग के गठन की सूचना दी तथा गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने के त्वरित निर्णय की मांग की। इस आयोग में डा. एम. आनन्दकृष्णन, डा.आर.एच. सिद्दिकी, श्री.पी.सी.त्यागी, प्रो.जी.डी. अग्रवाल, डा.आर.सी.त्रिवेदी, डा.कमलजीत सिंह चावला, डा.रवि चोपड़ा समेत कुल सात सदस्य शामिल किए गए। आयोग को गंगा के पूरे प्रवाह को जीवंत बनाये रखने के लिए जरूरी सुझावों के साथ रिपोर्ट तैयार करने का निर्देश दिया गया।

2 अक्तूबर, 2008 - तरुण भारत संघ के भीकमपुरा आश्रम में गंगा को राष्ट्रीय नदी की मांग तथा नदी न्याय नीति निर्माण हेतु जलकुंभ का आयोजन। शांतिकुंज हरिद्वार के प्रतिनिधि श्री वीरेश्वर उपाध्याय और सिख संत बाबा श्री सुखबीर सिंह सींचेवाल, (पंजाब) द्वारा 'क्यों बने गंगा एक राष्ट्रीय नदी प्रतीक ?' पुस्तक का लोकार्पण। इस पुस्तक के लेखक श्री राजेन्द्र सिंह व अरुण तिवारी हैं।

16 अक्तूबर, 2008 - जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी के नेतृत्व में स्वामी अविमुक्तेश्वरानन्द सरस्वती, राजेन्द्र सिंह, डा. आर.एस. दुबे, वी.डी.त्रिपाठी समेत गंगा सेवा अभियान के अन्य सदस्य

केन्द्रीय गृह राज्यमंत्री श्रीप्रकाश जायसवाल, मध्यप्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री दिग्विजय सिंह तथा केन्द्र सरकार के पूर्व संसदीय कार्य राज्यमंत्री सुरेश पचौरी की उपस्थिति में माननीय प्रधानमंत्री श्री मनमोहन सिंह जी से मिले और गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग के सकारात्मक पहलू समझाए। प्रधानमंत्री ने मौखिक तौर पर इस मांग से अपनी सहमति जताई।

18 अक्तूबर, 2008 - करंजलाड़, नागपुर में नदी नीति हेतु कुंभ का आयोजन।

20 अक्तूबर, 2008 - इंडियन चैम्बर ऑफ मर्चेन्ट, मुम्बई के साथ गंगा संबंधी मांग व देश की नदियों के संरक्षण में व्यापारियों की भूमिका पर चर्चा।

22 अक्तूबर, 2008 - इलाहाबाद के 'भारत स्काउट गाइड इंटर कालेज', मम्फोर्डगंज में उत्तर प्रदेश जलबिरादरी और इरादा संस्था के संयुक्त तत्वावधान ने गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग पर व्यापक चर्चा। डा. दीनानाथ शुक्ल 'दीन' (इलाहाबाद विश्वविद्यालय), डा. चन्द्रशेखर प्राण (नेहरु युवा केन्द्र संगठन, नई दिल्ली), न्यायमूर्ति श्री गिरधर मालवीय समेत सैकड़ों गणमान्य व्यक्तियों द्वारा मांग का समर्थन।

26, 27 अक्तूबर, 2008 - नई दिल्ली में गंगा ज्ञान आयोग की बैठक।

29 अक्तूबर, 2008 - गंगा की सहायक नदी कोसी के आपदा प्रबन्धन हेतु सुझावों के लिए श्री राजेन्द्र सिंह व प्रो. एम.एस. राठौड़ द्वारा कोसी जन आयोग का गठन। कोसी नदी यात्रा का निर्णय।

अध्यक्ष : श्री परितोष त्यागी, सदस्य : बहन मधु किश्वर, श्री दूनूराय, श्री विजय प्रताप, डा. भारतेन्दु प्रकाश, श्री के.जी. व्यास और श्री पंकज।

31 अक्तूबर, 2008 - मोड़ा नदी पर नदी न्याय नीति हेतु मुम्बई में चर्चा।

4 नवम्बर, 2008 : प्रधानमंत्री द्वारा जल, शहरी विकास पर्यावरण एवम् वन मंत्रालयों की मंत्रिमंडलीय बैठक में गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने का निर्णय। प्रधानमंत्री की अध्यक्षता व गंगा के पांचों राज्यों के मुख्यमंत्रियों की सदस्यता वाले गंगा नदी घाटी प्राधिकरण की घोषणा।

गंगा सेवा अभियान

जनजुड़ाव की तैयारी

जाहिर है कि हम गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग कर रहे थे..... गंगा के राष्ट्रीय नदी घोषित होने पर हमें बहुत खुशी हुई। इतना बड़ा निर्णय व्यर्थ न जाये, इसके लिए जरूरी था कि हम उनका सम्मान करें, जो गंगा संरक्षण के पुण्य काम में लगे हैं; उनसे बात करें जिनके दिल में राष्ट्रीय नदी के प्रति कोई सपना है। जानना जरूरी था कि गंगा प्रवाह तट के वासी अपने-अपने इलाके में अपनी इस नदी के कष्ट और निवारण को कैसे देखते हैं। उनकी समझ और भावना को समझे बगैर उन्हें गंगा के संरक्षण से नहीं जोड़ा जा सकता।

गंगा सेवा अभियान और जलबिरादरी के साथियों ने इस परिस्थिति में अपनी भूमिका और समय को पहचानकर निश्चय किया कि वे गंगा जी के किनारे जाकर गंगा जी से ही उसके कष्ट व निवारण का रास्ता पूछेंगे। गंगा को दुष्प्रभावी करने वाले कारण और उनके निवारण को गंगा और गंगा के किनारे रहने वाले समाज से बेहतर भला कौन जान सकता है ? जो समाज पीढ़ियों से गंगा के उत्कर्ष और क्षरण का गवाह हो..... राष्ट्रीय नदी का गौरव वापस लौटाने की जिम्मेदारी भी सबसे पहली उसी की है। उसकी भागीदारी के बगैर कोई सरकार..... कोई प्राधिकरण राष्ट्रीय नदी को उसका गौरव वापस लौटाने में सफल नहीं हो सकते। अतः जरूरी है कि उसकी राय को महत्ता मिले.....। उसकी राय गंगा और गंगा नदी घाटी प्राधिकरण का भविष्य तय करने वाले सदस्यों तक पहुंचे। इसी मंशा से हम अपने साथियों के साथ गंगा सम्मान संवाद यात्रा के जरिए रायशुमारी पर निकल पड़े।

इस यात्रा का एक मकसद, पिछले कुछ वर्षों से गंगा के प्रति जाहिर चिंता को एक मुहिम में बदलकर इस मुकाम तक पहुंचाने में जिस किसी की भी भूमिका रही है, उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना भी था। इस यात्रा के दौरान ऐसी गंगा संतानों को

उनके घर जाकर गंगा सेवा सम्मान से सम्मानित करने का कार्य मैंने स्वयं अपने हाथों से किया। इससे मुझे एक अतिरिक्त आत्मिक संतुष्टि मिली।

इस यात्रा ने गंगा को समझने में मदद की; जिसे समझे बगैर गंगा प्राधिकरण के समक्ष सही समाधान प्रस्तुत करना संभव न होता। इस समझ को बनाने में गंगा का आंखों देखा परिदृश्य, जगह-जगह संवाद के अलावा जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द सरस्वती जी, उनके प्रतिनिधि स्वामी श्री अविमुक्तेश्वरानन्द जी, मातृ सदन हरिद्वार के प्रमुख स्वामी श्री शिवानन्द सरस्वती जी, डा. दीनानाथ शुक्ल 'दीन' (इलाहाबाद विश्वविद्यालय), प्रो. यू.के.चौधरी (गंगा शोध केन्द्र, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय), विमल भाई (माटू संगठन उत्तराखण्ड) तथा गंगा ज्ञान आयोग से प्राप्त सन्दर्भ सामग्री से बड़ी मदद मिली।

इसी यात्रा में हम ठीक से समझ सके कि किसी भी नदी का पानी सिर्फ आकाश से बरसा जल या पहाड़ों पर जमी बर्फ से निकला पानी नहीं होता; हवा, मिट्टी, वनस्पति, जल का प्रवाह, उसकी गति, भूमि का ढाल, जीव व प्रकाश.... ये सभी मिलकर किसी नदी के जल को नदी विशेष का जल बनाते हैं। ये सभी कारक प्रत्येक नदी में एक अलग विशिष्टता लिए होने के कारण, उस नदी विशेष के जल को भी अलग और विशिष्ट बनाते हैं। जब-जब इन सभी को प्रभावित करने वाली गतिविधियां खड़ी की जाती हैं, तब-तब नदी के जल का चरित्र व गुण बदल जाता है। यदि आज गंगा जल की गुणवत्ता व मात्रा में गिरावट आई है, तो इसके पीछे इन सभी में आये बदलाव कहीं न कहीं कारण हैं। गंगा के प्रति समझ पैदा करने का क्रम गंगा सम्मान संवाद से शुरू होकर पुस्तक प्रकाशन की तिथि तक निम्नानुसार जारी है :

5 नवम्बर, 2008 : गंगा सम्मान संवाद यात्रा : गोमुख-गंगा सागर-गोमुख

25 दिसम्बर, 2008 : गंगा ज्ञान आयोग अनुशंसा रिपोर्ट प्रधानमंत्री समेत सभी मंत्रालयों/कार्यालयों को प्रेषित।

13 जनवरी, 2009 : गंगा शिविर सम्मेलन तथा गंगा सम्मान कार्यक्रम।

14 जनवरी, 2009 : गंगा हेतु प्रो जी. डी. अग्रवाल का आमरण अनशन शुरू।

28 से 30 जनवरी, 2009 : गंगा सम्मेलन, नई दिल्ली।

5 फ़रवरी, 2009 : भारत सरकार द्वारा भविष्य में भागीरथी गंगा पर बांध नहीं बनाने का आदेश तथा भागीरथी नदी में लोहारी नागपाला पर 16 क्यूमैक्स जल प्रवाह देने का निर्णय।

20 फरवरी, 2009: भारत सरकार द्वारा गंगाप्राधिकरण का नोटिफिकेशन जारी।

19 फरवरी, 2009 : लोहारी नागपाला परियोजना पर पर्यावरणीय प्रवाह देने हेतु परियोजना का कार्य पूर्ण रूप से रोकने का भारत सरकार का आदेश मिला। प्रो.जी.डी. अग्रवाल जी का अनशन भी इस दिन समाप्त हुआ।

26 फरवरी, 2009 : उत्तराखण्ड उच्च न्यायालय द्वारा भारत सरकार के निर्णय के विरुद्ध लोहारी नागपाला परियोजना कार्य शुरू कराया।

25 मई से 1 जून, 2009 : गंगा यात्रा-गोमुख से गहमर, गंगासागर से गहमर।

2 से 3 जून 2009 : गहमर, गाजीपुर (उत्तर प्रदेश) गंगा की न्याय नीति बनाने हेतु गंगा सम्मेलन (कुम्भ)

चूंकि अगले पांच वर्षों की सरकार नये जनादेश के साथ हमारे सामने है। गंगा नदी घाटी प्राधिकरण अब अपने कार्यों को विधिवत शुरू करेगा। हालांकि गंगा सेवा अभियान द्वारा प्रस्तुत 25 सूत्रीय मांग पत्र के जवाब में सरकार ने 20 फरवरी 2009 में गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की अधिसूचना जारी करते हुए प्राधिकरण के स्वरूप और कार्यों का एक कच्चा खाका प्रस्तुत किया था। इसमें जनभागीदारी, राज्य प्राधिकरणों के गठन, जलसंरक्षण को बढ़ावा देने, प्रदूषण को रोकने तथा गंगा में न्यूनतम पारिस्थितिकीय प्रवाह समेत कई महत्वपूर्ण मुद्दे शामिल कर लिए गये हैं। बावजूद इसके हम सभी सामाजिक और पर्यावरणीय प्रतिनिधियों का दायित्व है कि हम प्राधिकरण के समक्ष गंगा के कष्ट के कारण और उनके निवारण का दो टूक चित्र प्राधिकरण के सामने रखें। अगले पृष्ठों में हमने गंगा तट की समझ और जनाकांक्षाओं को प्रस्तुत करने की कोशिश की है। इसमें गंगा विशेषज्ञों की राय भी शामिल है।

राष्ट्रीय नदी होने का मतलब ?

एक बड़ा प्रश्न

गंगा के रूप में भारत के राष्ट्रीय प्रतीकों के इतिहास में एक नई कड़ी जुड़ चुकी है। राष्ट्रगान, राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्रीय पक्षी, राष्ट्रीय पशु और राष्ट्रीय पुष्प के बाद आज हम कह सकते हैं कि भारत में एक नदी ऐसी भी है, जिसे वैधानिक तौर पर राष्ट्रीय नदी का दर्जा प्राप्त है। अपने खास नैसर्गिक गुणों तथा सर्वमान्य श्रेष्ठता व आस्था की वजह से ही गंगा को यह दर्जा हासिल हुआ है।

पत्र सूचना कार्यालय, भारत सरकार द्वारा जारी प्रेस विज्ञप्ति में गंगा के प्रति जैसा भावनात्मक जुड़ाव, गंभीरता और संकल्प दिखाई देता है। विलंब के बावजूद आजादी के 62 वर्ष बाद गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की घोषणा एक सराहनीय कदम है। यह कदम उठाकर कांग्रेस ने न सिर्फ श्री राजीव गांधी के गंगा स्वच्छता के सपने को पूरा करने में हुई त्रुटियों की जिम्मेदारी ली है, बल्कि गल्तियों का प्रायश्चित करने का साहस और ईमानदारी भी दिखाई है।

अभी इस संकल्प को पूरा करने के लिए कई जरूरी काम करने बाकी हैं। सबसे पहला काम है... सरकार व सरकार के निर्णयों के प्रति आम-आवाम में अविश्वास का भाव खत्म करना।

इसी अविश्वसनीयता के चलते जब गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित किया गया, तो एक समाचार पत्र ने लिखा - ''अब गंगा सरकारी हो गई है।'' किसी ने इस घोषणा को चुनावी स्टंट कहा, तो किसी ने सिर्फ कागजी घोषणा। कइयों ने गंगा नदी घाटी प्राधिकरण को यह कहकर खारिज किया कि देश में अब तक कई ऐसे प्राधिकरण बने हैं, लेकिन उनसे काम की सफलता सुनिश्चित होने के उदाहरण नहीं के बराबर हैं। देश के कोने-कोने से अलग-अलग प्रतिक्रियाएं आयीं। एक

ओर इस घोषणा का बड़े पैमाने पर स्वागत हुआ, तो दूसरी ओर इसका मखौल उड़ाने की छुट-पुट कोशिशें भी हुईं।

ऐसे प्रश्न भी उठे कि जो नदी सदियों से लोगों की आस्था का केन्द्र रही है..... जिस नदी को भारतीय समाज 'गंगा मइया' कहकर संबोधित करता हो..... जिस गंगा की गोद में आकर हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, पारसी..... अमीर - गरीब, छोटा-बड़ा, दक्षिण या उत्तर का फर्क न रह जाता हो..... जिस गंगा में भारत ही नहीं, दुनिया भी एक राष्ट्र की अस्मिता और गौरव को देखती हो; ऐसी नदी को राष्ट्रीय नदी घोषित करने का क्या मतलब है ?

यह सवाल किसी के भी मन में उठ सकता है। यह स्वाभाविक भी है।

लोगों का सवाल झूठ नहीं है। यह सच है कि भारत सदियों से गंगा को 'मां' कहता व मानता आया है, लेकिन पिछले 30-35 वर्षों में हमारे समाज की जीवन पद्धति तथा सांस्कृतिक व सामाजिक मूल्यों में कुछ ऐसी गिरावट आई है कि उसने भारतीय समाज की सोच को ही प्रदूषित कर दिया। गंगा प्रदूषण इसी सोच का नतीजा है।

इधर पिछले 20 वर्षों में आर्थिक उदारीकरण व वैश्वीकरण के नाम पर भारत ने दुनिया के लिए अपने दरवाजे क्या खोले, दुनिया की कंपनियों में यहां के प्राकृतिक संसाधनों पर कब्जा करने की होड़ लग गई है। यह एक नई चुनौती है।

भारत का समाज जिस जल को वरुण देवता, जिस नदी और धरती को 'मां' कहकर पूजता आया है..... उसे खरीद-बिक्री की वस्तु मानकर मुनाफा कमाने के लालच ने नदी व धरती पर शोषण, प्रदूषण और अतिक्रमण का कहर बरपाने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ी है। शर्मनाक यह है कि अपना लालच पूरा करने के लिए कंपनियां किसी भी हद तक गिरने को तैयार हैं।

हमारी सरकारें भी उद्योगपतियों व व्यापारियों की स्वार्थपूर्ति के लिए निरीह जनों पर गोलियां बरसाने में नहीं झिझकतीं। उसे अब नंदीग्राम, दुमका, घड़साना जैसे गोलीकांडों से डर नहीं लगता। गंगा के सीने पर गंगा एक्सप्रेस-वे बनाने वालों को जब उत्तर प्रदेश के प्रतापगढ़ की कुंडा तहसील के मधुकरपुर गांव की गरीब

आबादी ने अपनी जमीन देने से मना किया, तो पुलिस-प्रशासन ने अपनी ताकत दिखाई। लालगंज तहसील, रायबरेली में बाहर रह रहे एक किसान को पता भी नहीं चला और उसकी जमीन पर अधिग्रहण का खंभा गड़ गया। सदमा लगा। नतीजन मौत हुई, लेकिन सरकार हर मोर्चे पर जे.पी. ग्रुप के साथ खड़ी दिखाई दी। सरकारों और धनपतियों के इस रवैये ने ही हमारी नदियों को उनके मातृत्व भाव से गिराकर शोषित, प्रताड़ित और उपेक्षित धाराओं में तब्दील कर दिया है।

भारत के संत व समाज भी इसके लिए कम दोषी नहीं हैं। हम मानते हैं कि भारतीय समाज की सांस्कृतिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय भावना व भक्ति में गिरावट आई है। यह गिरावट अब एक राष्ट्रीय रोग बन चुकी है। गंगा इसी राष्ट्रीय रोग का दुष्परिणाम है। रोग राष्ट्रीय है, अतः इसके उपचार की विधि व समझ भी राष्ट्रीय होनी चाहिए। इसके बगैर काम चलने वाला नहीं। इसी दृष्टि से हमने वैधानिक तौर पर गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग की थी।

रोग राष्ट्रीय है,
अतः इसके उपचार की विधि व समझ भी राष्ट्रीय होनी चाहिए।
इसके बगैर काम चलने वाला नहीं।
इसी दृष्टि से हमने वैधानिक तौर पर गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की मांग की थी।

दो राय नहीं कि किसी भी देश का नागरिक अपनी राष्ट्रीयता से प्यार करता है। क्या हम अपने राष्ट्रीय ध्वज से प्यार नहीं करते ? क्या आज कोई भारतीय हमारे राष्ट्रीय ध्वज 'तिरंगे' का मखौल उड़ाने की हिमाकत कर सकता है ? क्या आज राष्ट्रीय ध्वज का अपमान अथवा उससे छेड़छाड़ करने वालों को दण्डित नहीं किया जाता ? क्या तिरंगे का अपमान राष्ट्रद्रोह नहीं है? क्या हमने कभी दिल्ली के लालकिले पर लगे ब्रितानी ध्वज यूनियन जैक को उतार कर तिरंगा लहराने के लिए अपनी जान की बाजी नहीं लगाई ?

कहना न होगा कि आज कोई भी देशवासी अपने राष्ट्रीय प्रतीक का अपमान बर्दाश्त नहीं कर सकता। प्रत्येक देश ने हर स्तर पर अपने राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति

प्रत्येक देश ने हर स्तर पर अपने राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति व्यवहार का अनुशासन सुनिश्चित किया है। किसी भी देश में 'राष्ट्रीय' होने का यही मतलब होता है। गंगा यदि 'राष्ट्रीय नदी' घोषित हुई है, तो इसका भी यही मायने है।

व्यवहार का अनुशासन सुनिश्चित किया है। किसी भी देश में 'राष्ट्रीय' होने का यही मतलब होता है। गंगा यदि आगे 'राष्ट्रीय नदी' घोषित हुई है, तो इसके भी यही मायने हैं।

अब कोई गंगा का अपमान करने की हिमाकत न करे; गंगा का अपमान करने अथवा इसकी पवित्रता, शुद्धता, अविरल प्रवाह तथा मौलिक गुणों के साथ छेड़छाड़ करना तो दूर..... ऐसा सोचने व कहने वाले को भी दण्डित करने का प्रावधान हो। यूं जिस दिन बिना किसी भय के प्रत्येक भारतीय स्वेच्छा से गंगा को राष्ट्रीय नदी का सम्मान देगा; उसी दिन गंगा सही मायने में राष्ट्रीय नदी होगी।

यदि वर्तमान सरकार, समाज व संत इस मोर्चे पर विफल हुए, तो फिर सचमुच गंगा को राष्ट्रीय नदी कहने का मतलब.... राष्ट्रीयता और गंगा दोनों का अपमान होगा;.... तब गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने की घोषणा कोरी व कागजी ही कही जायेगी। फिर इसका कलंक उन सभी के माथे आयेगा, जिन्होंने गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने और कराने में बढ़-चढ़कर भूमिका निभाई है।

अब संतों को अपने मठों से, सरकारों को अपने दायरे से, संस्थाओं को अपने बैनर व प्रोजेक्टों से तथा समाज को अपने घरों से बाहर निकलकर दुनिया को बताना होगा कि गंगा का राष्ट्रीय नदी होने का क्या मतलब है।

इस मतलब को हकीकत में बदलने के लिए हमें तय करना होगा कि भारत गंगा के साथ कैसा व्यवहार व अनुशासन कायम करे? यदि हम और आप सचमुच राष्ट्रप्रेमी हैं, तो राष्ट्रीय नदी के प्रति भक्ति और प्रेम की गारंटी भी हमें ही देनी होगी। राष्ट्रीय नदी और राष्ट्रभक्ति का यही मतलब है। क्या इसके लिए हम सभी तैयार हैं ?

ऊर्जा की खातिर बांध

ग्लोबल वार्मिंग

बाढ़ नियंत्रण

राष्ट्रीय नदी के समक्ष चुनौतियां

नदी भूमि अतिक्रमण

अनियंत्रित प्रदूषण

भू-जल का शोषण

जनजुड़ाव का अभाव

ऊर्जा की खातिर बांध

अवरोध हटे, तो नदी बचे

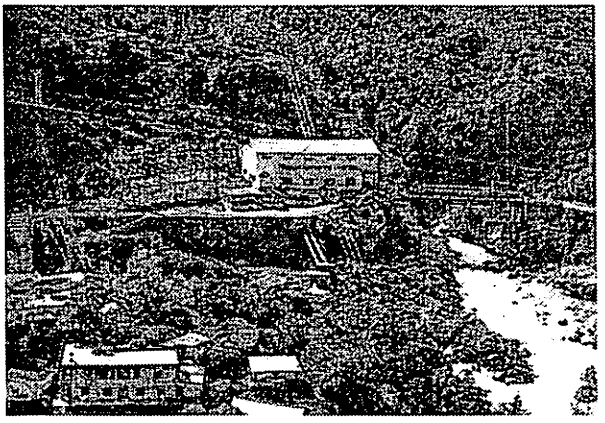

सच है कि बिना ऊर्जा के तो हम अपना हाथ भी नहीं हिला सकते, जीवन चलाना तो बहुत दूर की बात है। लेकिन हमें अपना जीवन चलाने के लिए न्यूनतम कितनी ऊर्जा चाहिए, इसकी सीमा रेखा तय करने की जिम्मेदारी किसकी है ? जाहिर है..... प्रत्येक की। लेकिन व्यवहार यह है कि हम अपनी जिंदगी में ऊर्जा की अधिक से अधिक खपत की ओर बढ़ रहे हैं। जिसकी जेब में जितना पैसा है, वह अपनी सुविधा की खातिर उतनी ऊर्जा की खपत को अपनी शान समझता है। एक जमाना था, जब इंसान अपनी जिंदगी के लिए पूरी तरह मानवीय ऊर्जा के स्वावलंबन पर यकीन करता था। आदम युग के उस जमाने से आगे बढ़कर हमने पशु और वानस्पतिक ऊर्जा पर निर्भरता बढ़ाई। धीरे-धीरे यह निर्भरता प्रकृति के दूसरे संसाधनों पर हावी होती गई। कोयला, खनिज, हवा, पानी..... सभी का बेहताशा दोहन कर हम अपनी जीवन शैली को सुविधा भोगी बनाने में जुट गये। इसके लिए कुदरत के खजाने से हमने कितना लूटा, कितना बर्बाद किया..... कोई परवाह नहीं की। पेट्रोल और डीजल की बढ़ती खपत से हमारा ब्रह्माण्ड कितना ही धधक उठा हो; ग्लोबल वार्मिंग का खतरा कितना ही बढ़ गया हो; मौसम का मिजाज बदलकर कितने ही कष्ट दे रहा हो; दुनिया इस खतरे से सचेत करने वालों को नोबेल शांति पुरस्कार देकर भले ही ऊर्जा की बढ़ती खपत की गंभीरता बता रही हो..... लेकिन हम

अपने लालच से पीछे हटने को तैयार नहीं हैं। यह क्रम अब और तेजी पर है। स्थिति अब अणु-परमाणु से ऊर्जा हासिल करने के लालच तक आ पहुंची है। जबकि हम सब अच्छी तरह जानते हैं कि प्रकृति किसी का लालच पूरा करने के लिए नहीं है। इससे हमें सिर्फ अपनी जरूरत भर लेने का अधिकार है।

हमें समझना होगा कि गांवों का देश कहे जाने वाला अपना भारत स्वावलंबी ऊर्जा व्यवस्था का आदि रहा है। हमने ही खेती के लिए ट्रैक्टर, पानी के लिए नलकूप, घरों में बिजली की रोशनी और सड़कों पर दौड़ने के लिए मोटरसाइकिलों पर निर्भरता बढ़ाई है। यह सब कुछ कहीं गावों में मानव श्रम के घटने, कहीं भूजल स्तर के गिरने, कहीं बाजारवाद और कहीं विकास के नये सपने के चलते हुआ है। अपनी बदलती हुई जीवन पद्धति के लिए अब क्या गांव..... क्या शहर सभी कुछ..... यहां तक अपने पूज्य पंचमहाभूतों को भी दांव पर लगाने में जुट गये हैं।

परिणामस्वरूप पूरा ब्रह्माण्ड ही खतरे में पड़ गया है। जाने कितनी जातियां-प्रजातियां किसी ट्रैक्टर के नीचे, किसी परमाणु के धमाके और किसी ऊर्जा संयंत्र की बलि चढ़कर नष्ट हो रहे हैं। जब एक पूरी वैज्ञानिक खाद्य शृंखला अस्त-व्यस्त हो रही है, तो उसी का हिस्सा इंसान भला कैसे सुरक्षित रह सकता है!

अक्षय ऊर्जा के उस पारंपरिक सिद्धांत को हमने छोड़ दिया है, जो गोमाता के पंचगव्य से औषधि का निर्माण करता था; उससे उत्पन्न बैल की शारीरिक ऊर्जा से खेती, धरती से पानी निकासी, मल-मूत्र से खेतों को ताकत-बायोगैस की रोशनी और उसके कंधों पर यातायात की व्यवस्था सुनिश्चित करता था। बैल हमारा पावर प्लांट था और हम खुद उसके शारीरिक श्रम में अपना शारीरिक श्रम जोड़कर ऊर्जा जरूरतों की पूर्ति करते थे। ऐसे ही देश के विभिन्न हिस्सों में मानव-जीव और वनस्पति के सैद्धान्तिक ऊर्जा गठजोड़ के दृश्य कोई नई बात नहीं है।

सूर्य वंदना से प्राप्त सौर उर्जा से अपना स्वास्थ्य और मानसिक ऊर्जा हम सदियों से हासिल करते रहे हैं। प्रकृति को बिगाड़े बगैर जीवन चलाने के लिए जरूरी ऊर्जा ग्रहण करने का यह अक्षय ऊर्जा सिद्धांत भारत में सदियों से लागू रहा है।

इसमें हमने प्रकृति से लेन-देन के संतुलन को कभी नहीं खोया। जितना लेना, प्रकृति को कृतज्ञ भाव से कम से कम उतना लौटाना..... हमारी आदत रहा है।

लेकिन आज सब कुछ बिगड़ गया है। प्रकृति से लेना ज्यादा और देना कम। आज हम इसी सिद्धांत पर चल रहे हैं। ऊर्जा की खपत घटाने की बजाय उसकी सीमा रेखा को और बढ़ाकर हम गर्व महसूस कर रहे हैं। इतना ही नहीं जरूरत के लिए हम प्रकृति को खोखला करने में भी संकोच नहीं कर रहे हैं। देश में नदियों के प्रवाह मार्गों में बांध के रूप में अवरोधों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। भले ही कि भाखड़ा नांगल से लेकर अब तक देश में सिंचाई और जलविद्युत की दृष्टि से जितने भी बांध बनाये गये हैं, वे प्रस्तावित क्षमता पर खरे साबित नहीं हुए हों। टिहरी और मनेरी समेत सभी जलविद्युत परियोजनाओं में जितनी विद्युत उत्पादन क्षमता प्रस्तावित की गई..... उसका आधा और कहीं-कहीं एक तिहाई-चौथाई ही उत्पादन हुआ हो। टिहरी और मनेरी दोनों परियोजनाएं इसका प्रमाणित उदाहरण हैं। भले ही आपको पनबिजली से लाभ के दावे का गणित समझ में न आये, वे तो नदी नाड़ी तंत्र पर अवरोध खड़े करते ही रहेंगे।

आखिर हम कब समझेंगे कि बांधों में गाद भराव, पानी को उठाकर नीचे गिराने तथा सुरंगों में नदी को डालने की तकनीक के कारण नदी का पानी अपना गुण खो देता है। यहां यह समझने की जरूरत है कि नदी का पानी सिर्फ H_2O नहीं होता। गंगा का पानी, गंगा प्रवाह मार्ग और उसकी पारिस्थितिकी में कुछ अपनी अनोखी खासियत की वजह से ही अक्षुण्ण जल की गुणवत्ता हासिल कर सका है।

कुछ लोग कह रहे हैं कि बड़े नहीं, तो कम से कम नदियों पर छोटे 'रन ऑफ रिवर बांधों' की अनुमति तो मिलनी ही चाहिए। यदि नदी नाड़ी तंत्र में बड़े बांध बड़ी रुकावट हैं, तो ये छोटे रन ऑफ रिवर बांध छोटी रुकावट। नुकसान तो इनसे भी होता ही है। ग्लोबल वार्मिंग की चुनौती को लेकर कोई कह रहा है कि ऊर्जा की कुशलता बढ़ायें, तो बात बनेगी। पता नहीं ऊर्जा कुशलता बढ़ाने से बात बनेगी या खपत की संस्कृति घटाने से बात बनेगी। देश में ऊर्जा के यथार्थ को अच्छी

से ही गंगा के उपजाऊ मैदानों का निर्माण हुआ। वर्तमान में यह तलछट हुगली नदी के रास्ते गंगासागर पहुंच कर समुद्र को पीछे ढकेल रही है। सामान्यतः समुद्र की लहरें सहज रूप से तट पर प्रहार करके मिट्टी को बहा ले जाती हैं। नदी द्वारा तलछट लाने से समुद्र द्वारा लील ली गयी मिट्टी की भरपाई हो जाती है। तलछट के अभाव में समुद्र देश की पावन भूमि को लील रहा है। जाहिर है ऊर्जा के नाम पर बने हाइड्रोडैम नुकसानदेह हैं। लेकिन ताज्जुब है कि जलविद्युत का आकर्षण घटने की बजाय बढ़ रहा है। आज के दौर में तेल के बढ़ते मूल्यों ने जलविद्युत का आकर्षण और बढ़ा दिया है।

योजना आयोग ने 2006 में समग्र ऊर्जा नीति प्रकाशित की थी। इसमें जलविद्युत को श्रेष्ठतम बताया गया था। कहा कि इसमें जहरीली गैसों, राख एवं गंदे पानी तीनों का उत्पादन नहीं होता है। जलविद्युत के इस आकर्षक आकलन पर पुनर्विचार करने की जरूरत है।

कोचीन विश्वविद्यालय के मरीन जियोलोजी विभाग ने गंगासागर द्वीप का अध्ययन किया है। इस अध्ययन के अनुसार 1976-96 के 20 वर्षों में गंगा सागर द्वीप का क्षय 0.79 वर्ग किलोमीटर प्रति वर्ष की दर से हो रहा था। 1996-99 के तीन वर्षों में क्षय की यह दर सात गुणा बढ़ गई है और प्रतिवर्ष समुद्र 5.47 वर्ग किलोमीटर भूमि लीलने लगा है। ऐसा बांधों में तलछट रुकने के कारण हो रहा है। बांधों का ऐसा ही प्रभाव आंध्र प्रदेश के गोदावरी डेल्टा पर भी पड़ रहा है। आंध्र विश्वविद्यालय, विशाखापट्टनम एवं जापान की यामागूची तथा शिमाने विश्वविद्यालयों द्वारा किए गए अध्ययन में पाया गया कि पिछले तीन दशकों में 1836 हैक्टेयर भूमि को समुद्र लील गया है। सत्तर के दशक में गोदावरी नदी एक वर्ष में 14.5 करोड़ टन तलछट लाती थी, जो अस्सी के दशक में घटकर 8.7 करोड़ टन हो गई और नब्बे के दशक में 5.6 करोड़ टन रह गई। अध्ययन में कहा गया है कि अधिकाधिक संख्या में बांध के बनने से तलछट रुक गई है और तटों का क्षय हो रहा है।

जापान के जियोलाजिकल सर्वे द्वारा किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि मिस्र की नील नदी पर आसवान बांध बनाने से नदी का समुद्री मुख चार

तरह समझे बगैर गंगा नदी घाटी प्राधिकरण यदि कोई कदम उठाता है-तो वह राष्ट्रीय नदी संरक्षण की दिशा में कितना कारगर होगा..... यह संशय हमेशा बनेगा रहेगा। इसलिए जरूरी है कि हम पहले ऊर्जा उत्पादन के यथार्थ पर चर्चा कर लें।..... खासतौर पर पनबिजली बांधों के यथार्थ पर!

पनबिजली बांधों का यथार्थ

समुद्री तटों के क्षय और बाढ़-सुखाड़ को बढ़ावा

आज बिजली के लिए पहाड़ों में बांध बनाये जा रहे हैं। इससे वर्षा से होने वाली मिट्टी बांधों में इकट्ठा होती जा रही है। परिणामस्वरूप इन बांधों के जलग्रहण क्षेत्रों में मिट्टी के कटाव और जल का रुकाव नहीं हो पा रहा है। इससे एक तरफ पहाड़ों के ऊपर धरती का कटाव हो रहा है और दूसरी तरफ मिट्टी बड़े बांधों में रुककर समुद्र के कटाव को रोकने में असफल हो रही है।

मार्च 2009 के पहले सप्ताह में मैं पश्चिम बंगाल की हुगली नदी के घोड़ामार और गंगा सागर द्वीप में था। यह देखकर मुझे धक्का लगा कि हमारे हाइड्रोडैम धरती को निगल रहे हैं। यदि ऊपर ही कटाव रुक जाये, तो धरती और नदी में नमी बनी रहेगी और नदियों का सूखना और गाद का भरना रुक जायेगा। ठीक उसी तरह..... जैसे राजस्थान की अरवरी, रूपारेल, सरसा, भगाणी, तिलदह, जहाजवाली, साबी और महेश्वरा नदियों के जलग्रहण क्षेत्र में कटाव रुका है। जब ऊपर की मिट्टी का कटाव रुकेगा, तो वहां का उपजाऊपन भी बना रहेगा। कटाव रुकने से उपरोक्त नदियों के क्षेत्र में रोजगार बढ़े और अन्न की पैदावार व दूध का उत्पादन बढ़ा। इससे प्राकृतिक ऊर्जा स्वतः अधिक हुई।

समझना होगा कि हाइड्रो ऊर्जा के लिए बने बांध अपने ऊपर के जलागम क्षेत्र में सुखाड़ लाते हैं और बांध के पास बाढ़ पैदा करते हैं। ऊपर से आई तलछट बाढ़ का स्तर ऊपर करती जाती है। इससे मिट्टी के जमाव की समस्या पैदा होती है। विशेषकर जलविद्युत के लिए बनायी गई झीलों में नदियों द्वारा ले जाई जा रही तलछट रुक जाती है जिससे हमारे तटीय क्षेत्रों का क्षय हो रहा है। कभी गंगा एवं यमुना द्वारा हिमालय से लाई तलछट के जमा होने

किलोमीटर भीतर आ गया है। अध्ययन में कहा गया है कि पूर्व में विश्व की नदियों द्वारा जो तलछट समुद्र को पहुँचाई जा रही थी, उसकी 30 फीसदी अब बांधों के पीछे रुक गई है। चीन की हुआंग नदी द्वारा साठ एवं सत्तर के दशक में तलछट भारी मात्रा में समुद्र तक पहुंच रही थी। सीयोलांगजी बांध के बनने के बाद केवल 10 प्रतिशत तलछट पहुंच रही है; जिसके कारण तटीय क्षेत्रों का भारी क्षय हो रहा है।

इन अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि हाइड्रोपावर के लिए बनाए जा रहे बांधों का तटीय क्षेत्रों के क्षय से अंतरंग संबंध है। इस अंतरंग संबंध की पुष्टि भारत की हाइड्रोपावर योजनाओं से भी होती है। गंगा की सहायक अलकनंदा नदी पर उत्तराखण्ड के श्रीनगर में बनने वाले बांध की पर्यावरणीय रपट में स्वीकार किया गया है कि अगले नौ वर्षों में बांध का जलभराव क्षेत्र तलछट से पूरी तरह भर जाएगा। इसमें जितनी तलछट रुकेगी, उतनी ही गंगासागर को वंचित करेगी और तटों के क्षय को बढ़ावा देगी।

तलछट के जलविद्युत बांधों में रुकने का बांग्लादेश पर विशेष दुष्प्रभाव पड़ेगा। बांग्लादेश के अखबार इंडिपेन्डेन्ट में मुनव्वर हुसैन लिखते हैं कि बांग्लादेश की धरती ब्रह्मपुत्र, गंगा एवं मेघना नदियों द्वारा लाई गई तलछट से बनी है। तलछट की मात्रा कम होने से नदियों द्वारा एक वर्ष में लगभग 10,000 हैक्टेयर भूमि कट रही है। लगभग 1200 किलोमीटर नदी तट कटाव से प्रभावित हो चुका है। जिस प्रकार गंगा, गोदावरी, नील एवं हुआंग्हो नदियों का डेल्टा बांध बनाने से कट रहा है, उसी प्रकार बांगलादेश का भू-भाग भी कट रहा है। ग्लोबल वार्मिंग के साथ यह कटान भयंकर रूप धारण कर सकता है। ग्लोबल वार्मिंग के कारण समुद्र के जल स्तर के बढ़ने से समुद्र भीतर की तरफ बढ़ेगा। समुद्र को वापस ढकेलने के लिए अब तक तलछट उपलब्ध थी। तलछट के अभाव में समुद्र के प्रवेश को रोकना संभव नहीं होगा। बांग्लादेश के लोग समुद्र में डूबेंगे और भारत में शरण लेंगे। जैसा कि 1971 में हुआ था। अतः भारत द्वारा गंगा के तलछट को रोकने से भारत के लिए राजनीतिक संकट पैदा होने की संभावना बनती है।

अंतर्राष्ट्रीय कानून के तहत भारत को बांग्लादेश पहुंचने वाली तलछट रोकने का अधिकार नहीं है। संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 1997 में ''अंतर्राष्ट्रीय नदियों के गैर यातायात उपयोग के कानून'' पर समझौता तैयार किया था। इस समझौते का केवल तीन देशों-चीन, तुर्की एवं बुरुन्डी ने विरोध किया था। भारत ने इसका विरोध नहीं किया था। इस समझौते की धारा 7.1 में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि ''अपनी सरहद में अंतर्राष्ट्रीय नदियों का उपयोग करते समय सदस्य देश सुनिश्चित करेंगे कि दूसरे देशों को नुकसान नहीं पहुंचे।'' धारा 7.2 में कहा गया है कि ''यदि दूसरे देश को हानि होती है, तो प्रभावित देश के साथ चर्चा करके ऐसे कदम उठाए जाऐंगे कि हानि न हो। जहां उचित हो, वहां प्रभावित देश को मुआवजा देने की चर्चा की जाएगी।'' आने वाले समय में भारत के जलविद्युत बांधों में तलछट रुकने से बांग्लादेश की भूमि का कटान तीव्र होगा, जैसा कि अभी गंगासागर का हो रहा है; तब भारत सरकार को इन बांधों को हटाना होगा अथवा बांग्लादेश को भारी मुआवजा देना होगा।

वर्तमान में देश दोहरे संकट की चपेट में है। एक ओर तेल के बढ़ते मूल्यों के कारण ऊर्जा के दूसरे स्रोतों का विकास जरूरी है, तो दूसरी ओर तटीय क्षेत्रों की रक्षा आवश्यक है। फिर भी योजना आयोग जलविद्युत के विकास की पैरवी कर रहा है। आयोग जलविद्युत बांधों के प्रभाव का सही आकलन करने में चूक गया है। आयोग कहता है कि बांधों से जल की गुणवत्ता पर दुष्प्रभाव नहीं पड़ता है। यह मान्यता सही नहीं है, चूंकि जल से तलछट को निकाल लेना ठीक उसी प्रकार का हानिकारक परिवर्तन है, जैसे गन्ने के रस से चीनी को निकाल लेना। ऐसा परिवर्तन प्रदूषण के समान ही है। इसके अलावा बांधों में पत्तों आदि के सड़ने से जहरीली मीथेन गैस बनती है। इन दुष्प्रभावों को अनदेखा करके योजना आयोग जलविद्युत को बढ़ावा नहीं दे सकता।

आर्थिक विकास के लिये हमें ऊर्जा चाहिये। परन्तु ऊर्जा के लिये देश की बहुमूल्य भूमि को तो स्वाहा नहीं किया जा सकता। हमारे संविधान के अनुसार देश की टैरिटोरियल इन्टेग्रिटी (तटीय अखंडता) की रक्षा करना सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी है। कारगिल युद्ध में एक छोटे से टाइगर हिल पर अपना

कब्जा जमाने के लिये देश ने करोड़ों रुपये स्वाहा कर दिये थे। हम यह कैसे भूल सकते हैं। देश में ऊर्जा के नाम पर भूमि के कटान, गोदावरी और गंगा सरीखी नदियों के तटों के क्षरण के साथ-साथ चोरी-भ्रष्टाचार को लगातार बढ़ाया जा रहा है। पनबिजली के इस यथार्थ की सीख को झुठलाया नहीं जाना चाहिए, तभी गंगा को राष्ट्रीय नदी का गौरव और उसका नैसर्गिक स्वरूप हासिल हो सकेगा।

पनबिजली का सौदा

कितना सच्चा, कितना झूठा?

उत्तराखण्ड सरकार के आकलन में पेंच है। मान लिया गया है कि नदी को सुरंग आदि में बहाने से उसकी सृष्टिवर्धक भूमि का ह्रास नहीं होता है। स्नानार्थियों के सुख में कोई कमी नहीं आती। भूस्खलन का कोई खतरा नहीं बढ़ता। उनका मानना है कि पनबिजली के उत्पादन में बस लाभ ही लाभ है। इस मान्यता पर पुनर्विचार करने की जरूरत है। पुनर्विचार किये बगैर पनबिजली के जमा-जोड़ का आकलन नहीं किया जा सकता।

इस लेखक को भागीरथी के उच्चस्तरीय विशेषज्ञ दल के सदस्य रहने का मौका मिला है। उस दौरान नदी को सुरंग और बांधों में बांधने से जल की गुणवत्ता में आने वाली कमी एवं नदी के पर्यावरणीय प्रवाह की जरूरत समझने-समझाने का मौका मिला। उसी दौर में मैंने कहा था कि गंगा को बांध, बैराज या सुरंग में बांधने से बहुत हानि होगी। जो गाद अब तक गंगासागर तक बहकर देश के तटीय क्षत्रों के क्षरण को रोकती है, वह अब टिहरी जैसी बड़ी झील में फंस जायेगी। गंगा का निर्बाध बहाव बाधित होने से जल में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जायेगी, जलीय जन्तुओं को प्राणशक्ति नहीं मिलेगी और पानी प्रदूषित होने लगेगा।

ऋषिकेश और हरिद्वार के तीर्थयात्री पुष्टि करते हैं कि टिहरी बांध बनने के बाद उन्हें स्नान में उतना सुख नहीं मिलता है जितना कि पहले मिलता था। गंगा के बहाव को रोकने के दूसरे दुष्प्रभाव भी होंगे। कैपिलरी प्रभाव के कारण झील के किनारे पानी पहाड़ पर चढ़ता है। इससे भूस्खलन होता है। पानी में रुकावट होने से मच्छरों को पनपने का अवसर मिलता है। इसी कारण पहाड़ों में भी मलेरिया का

प्रकोप हुआ है। दरअसल इन तमाम आर्थिक हानियों का आकलन नहीं किया जाता है। ठीक आकलन के अभाव में ही उत्तराखण्ड सरकार भ्रमवश गंगा पर बाधों की श्रृखंला बनाने को उद्यत है।

चिंता की बात है कि मात्र कुछ सौ मेगावाट बिजली व मुट्ठी भर लोगों के रोजगार को विकास बताकर हजारों वर्षों से हमारी संस्कृति, सभ्यता व जीवंतता का पर्याय बन चुकी गंगा को उपभोग प्रधान विकास की बलिवेदी पर चढ़ाया जा रहा है। गंगा की हत्या से प्राप्त बिजली हो क्या कोई भारतीय जगमगाना चाहेगा ?

इन बांधों से उत्पन्न होने वाली बिजली के लाभ की गणना में भी घाल-मेल है। एनएचपीसी ने पर्यावरण मंत्रालय में परियोजना के लाभ-हानि का जो चिट्ठा दाखिल किया है, उसमें बताया है कि परियोजना से 127 करोड़ यूनिट बिजली का उत्पादन होगा। इसकी लागत 2.37 रुपये प्रति यूनिट आयेगी। कहा गया है कि देश को तीन सौ करोड़ रुपये का लाभ होगा। इस गणना में दो समस्यायें हैं। पहली यह कि बिजली की उत्पादन लागत को परियोजना का लाभ बताया गया है। यूं समझिए कि दुकानदार कपड़े के खरीद मूल्य को दुकान द्वारा अर्जित लाभ बता रहा है। वास्तव में बिक्री के दाम में से लागत को घटाकर लाभ की गणना की जानी चाहिए। लागत जितनी ज्यादा होती है, लाभ उतना ही कम होता है। परन्तु कंपनी ने बढ़ी हुई लागत को ही बढ़ा हुआ लाभ बता दिया है।

गणना में दूसरी समस्या है कि कंपनी के लाभ को ही समाज का लाभ बता दिया गया है। मान लीजिये कि तम्बाकू और अगरबत्ती बनाने वाली दो कंपनियां प्रत्येक एक करोड़ रुपये का प्रतिवर्ष लाभ कमाती हैं। इन उद्योगों से सामाजिक लाभ स्पष्ट रूप से अलग-अलग है। जैसे तम्बाकू कंपनी को अपने उद्योग से लाभ हो सकता है, लेकिन समाज को उस उद्योग से हानि हो सकती है। इसके विपरीत अगरबत्ती से कम्पनी को आर्थिक लाभ के साथ-साथ सामाजिक लाभ भी हो सकता है। अतः कम्पनी द्वारा अर्जित आर्थिक लाभ को सामाजिक लाभ नहीं घोषित किया जा सकता।

मान लीजिये एक यूनिट बिजली के उपयोग से किसान को छः रुपये का लाभ होता है। उसे बिजली खरीदने के लिये छः रुपये अदा करने होते हैं। उसे मात्र दो

रुपये का ही लाभ मिलता है। इस लाभ की अलग से गणना होनी चाहिये। ऐसा न करने से परियोजना के सामाजिक रूप से लाभप्रद होने अथवा हानिप्रद होने का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है।

इन परियोजनाओं से धर्म और अर्थ दोनों की हानि हो रही है। तटीय क्षेत्रों का अधिक क्षरण होगा-यह धर्म की हानि है। चूंकि इसमें किसान को मिलने वाले लाभ की गणना ही नहीं की गयी है, अतः यह अर्थ की हानि है। इस परियोजना का कुल लाभ 152 करोड़ और हानि 373 करोड़ रुपये प्रति वर्ष है। फिर भी ऐसी परियोजनायें कंपनियों एवं सरकारी कर्मचारियों के लिये लाभप्रद साबित होती हैं। बांध निर्माण कंपनियों को बिजली की बिक्री से मुनाफा होता है। सरकार को बड़े ठेके देने में कमीशन मिलता है एवं 12 प्रतिशत मुफ्त बिजली मिलती है, जिससे अधिकारियों की लाल बत्ती जगमग होती है।

मेरा अनुमान है कि लगभग ऐसी ही स्थिति उत्तर प्रदेश द्वारा प्रस्तावित गंगा एक्सप्रेस-वे की है। हाइवे बनाने के लिये भूमि का मुआवजा न देना पड़े, इसलिये गंगा के तट को बेचा जा रहा है। पर्यावरण की दृष्टि से नदी तट की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कछुए और केंचुए जैसे विविध तरह के प्राणी जीवनयापन करते हैं। इन्हें नजरन्दाज करके नदी को कंक्रीट की दीवारों से नहीं बांधना चाहिये।

यदि गंगा पर बन रहे तटबन्धों, बैराजों, एक्सप्रेस-वे एवं बांधों के सही लाभ हानि का आकलन हो तो सरकार स्वतः जान जायेगी कि पनबिजली का सौदा सही मायने में सच्चा सौदा नहीं है।

रन ऑफ रिवर बांधों का सच

प्रवाह घटेगा: प्रदूषण बढ़ेगा

हिमालय से निकलने वाली शुद्ध-सदानीरा नदियों पर 6 रन ऑफ रिवर बांध बनाने का एक नया दौर शुरू हुआ है। ऐसा करने का मकसद बड़े बांधों के विरुद्ध बुलंद हुई आवाज से बचना है। नई सरकारें नये नामों से सब पुराने काम कर विकास के नाम पर विकृति और विनाश पर उतारू हैं।

इस संदर्भ में उत्तराखण्ड को ही लें। वहां के मुख्यमंत्री ने कहा कि बड़े बांधों के स्थान पर छोटे रन आफ रिवर बांध बनाये जायेंगे।

आइए! इनकी सच्चाई जाने। बड़े बांधों में मानसून में पानी को एक बड़ी झील में रोक लिया जाता है। गर्मियों में इस पानी का उपयोग बिजली बनाने के साथ-साथ सिंचाई के लिये भी किया जाता है। झील का स्तर बरसात में ऊंचा और गर्मियों में नीचा हो जाता है। रन ऑफ रिवर बाधों में छोटी झील बनाई जाती है। जितना पानी ऊपर से आता है, उतने पानी को लगातार निकाल दिया जाता है। ऐसे बांध से केवल बिजली उत्पन्न की जाती है। वे कहते हैं कि रन ऑफ रिवर बांधों में कोई समस्या उत्पन्न नहीं होती है। बड़े बांधों में अनेक गांव एवं शहर पूरी तरह जलमग्न हो जाते हैं; जैसे आज पुराना टिहरी डूब गया है। उनका कहना है कि रन आफ रिवर बांधों में जल का भराव नदी के किनारे 40-50 मीटर की ऊंचाई तक होता है। इससे पूरा गांव कम ही डूबता है और इन बांधों के निर्माण से विस्थापन भी कम होता है।

टिहरी बांध के पास रहने वालों के अनुभव हैं कि जल भराव से कोहरा एवं ठंड बढ़ी है, साथ ही उपज कम हुई है। जैसे भाखड़ा क्षेत्र में मलेरिया का प्रकोप बढ़ा, अब ऐसी ही संभावना टिहरी क्षेत्र में भी उत्पन्न हो रही है। बड़े बांधों से जल का रिसाव पृथ्वी के गर्भ में पड़े गर्म मैग्मा तक पहुंच सकता है; जिससे ज्वालामुखी फट सकते हैं। रन आफ रिवर बांधों में ये समस्यायें कम आती हैं। यह कहकर सरकार अब इन्हें बनाना चाहती है।

यहां किसी निष्कर्ष पर पहुंचने के पहले दो तरह के बांधों का निष्पक्ष अध्ययन करना जरूरी होगा। मान लीजिये किसी पहाड़ में नदी बह रही है। पहला विकल्प यह है कि उस पर एक बड़ा बांध बना लिया जाये। 90 किलोमीटर की नदी में 45 किलोमीटर में भराव कर दिया जाये और शेष 45 किलोमीटर में नदी को पूर्ववत् बहने दिया जाये। दूसरा विकल्प यह है कि 30-30 किलोमीटर की दूरी पर तीन रन ऑफ रिवर बांध बना दिये जायें। बड़े बांध से बरसाती पानी को एकत्रित करके बिजली बनाई जायेगी और सिंचाई भी होगी। परन्तु केवल 45 किलोमीटर के ढलान का उपयोग करके बिजली उत्पन्न होगी।

तीन रन ऑफ रिवर बांधों में पूरे 90 किलोमीटर दूरी के ढलान का उपयोग करके बिजली बनाई जायेगी, परन्तु सिंचाई के लिये पानी उपलब्ध नहीं होगा। इस प्रकार आर्थिक दृष्टि से दोनों विकल्प लगभग बराबर बैठेंगे। तथापि तुलना में तीन रन ऑफ रिवर बांध बनाना ज्यादा उपयुक्त लगता है चूंकि डूब क्षेत्र छोटा होगा, विस्थापन कम होगा, कोहरा एवं ठंड तुलना में कम बढ़ेगी और रिसाव भी कम होगा। परन्तु तीन रन ऑफ रिवर बांध बनाने से दूसरी समस्यायें पैदा होंगी, जिन पर गौर करना चाहिये।

पहली समस्या जल में ऑक्सीजन की मात्रा की है। तरुण भारत संघ के उपाध्यक्ष प्रो. श्री जी डी अग्रवाल ने एक शोध के हवाले से बताया कि गंगाजल में दूसरी नदियों की तुलना में ऑक्सीजन की मात्रा ज्यादा पाई गई है। ऑक्सीजन की उपलब्धता के कारण नदी में प्रदूषण वहन करने की क्षमता उत्पन्न होती है। नदी के जल में असंख्य जीवाणु होते हैं, जो इसमें आने वाली गन्दगी को खाकर नष्ट कर देते हैं। पानी में ऑक्सीजन कम होने पर जीवाणुओं की संख्या कम हो जाती है और नदी का पानी सड़ने लगता है। पहाड़ों में पानी पत्थरों से टकराकर उछलता है और ऑक्सीजन सोखता है। रन ऑफ रिवर बांध की श्रृंखला बनने से नदी का पानी एक झील से दूसरी झील में जाता है। पानी को ऑक्सीजन सोखने का मौका नहीं मिलता। फलस्वरूप मैदानी क्षेत्रों में प्रदूषण बढ़ता है। साथ ही नदी की सफाई का खर्च भी अधिक बैठता है।

दूसरी समस्या पहाड़ी क्षेत्र में नदी के किनारे रहने वालों की है। यहां के निवासी भवन निर्माण के लिये नदी से रेत एवं पत्थर आसानी से प्राप्त कर लेते हैं। नदी की पूरी लम्बाई में रन ऑफ रिवर बांध बनने से बालू तथा पत्थर झील की तलहटी में समा जाते हैं और यहां के लोग प्रकृति की इस निःशुल्क देन से वंचित हो जाते हैं।

झील की डूब में सामलाती भूमि प्रचुर मात्रा में डूबती है और मिलने वाले ईंधन एवं चारागाह से स्थानीय लोग वंचित हो जाते हैं।

टिहरी जैसे बांध से पूर्णतया विस्थापित अनेक गांवों को हरिद्वार एवं देहरादून में बसा दिया गया। उन्हें लाभ-हानि एक बार हुई और वे नये सिरे से जीवनयापन

करने लगे। परन्तु रन ऑफ रिवर बांधों में ऐसा नहीं है। इसकी गिरफ्त में आने वालों की स्थिति उस दयनीय व्यक्ति जैसी होगी, जिसके हाथ-पैर काट लिये जायें और पूर्ववत् जीवन जीने की सलाह दी जाये। दरअसल ऐसे बांधों में गांव वालों के जीवनयापन के साधन बालू, पत्थर, लकड़ी, चारागाह इत्यादि जब्त करके उन्हें बेहाल कर दिया जाता है।

गढ़वाल के पहाड़ी क्षेत्रों में मुर्दों को बहती नदी के तट पर जलाया जाता है। तत्पश्चात् नदी से एक पत्थर मृतात्मा के प्रतिनिधि के रूप में घर पर लाया जाता है और इन पत्थरों की पितृ के रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी पूजा की जाती है। रन ऑफ रिवर बांध की श्रृंखला बना देने से पहाड़ के लोग बहते पानी से वंचित हो जायेंगे। उन्हें मुर्दों को हरिद्वार जैसे दूरस्थ क्षेत्रों में ले जाकर संस्कार करना पड़ेगा।

किसी भी झील के आसपास भूस्खलन होना स्वाभाविक है। टिहरी बांध के ऊपर भागीरथी नदी के बलडोगी आदि गांव की भूमि भारी मात्रा में कट रही है। मकानों में दरार पड़ रही है। रन ऑफ रिवर बांधों की श्रृंखला बनाने से यह दुष्प्रभाव पूरी लम्बाई में पड़ेगा।

ऐसे बांधों से नदी को सांस लेने का मौका नहीं मिलता है। प्रकृति का शोषण करते समय उसके मूल स्वभाव को फलित होने का मौका दिया जाना चाहिए। बांधों की श्रृखंला के तहत् नदी को अपनी मूल प्रवृत्ति के अनुकूल बहने का अवसर नहीं दिया जाता है। यह काम गंगा माता को दीवार में चिन देने जैसा है। ऐसे दुस्साहस का प्रकृति अवश्य बदला लेती है। सिंधु घाटी का विनाश इसी का परिणाम है।

पहाड़ों में पनबिजली परियोजनाओं के ऊपर बसे गांवों का धंसना, विस्फोटों के भारी धमाकों से पहाड़ों की चट्टानी संरचना का हिल जाना, भूकंपीय जोन-5 में होने से इन हिले हुए पहाड़ों पर बसे लोग भूकंप आने पर भयंकर त्रासदी झेलने को मजबूर हैं। चट्टानों की प्राकृतिक रचना क्षत-विक्षत होने से गांवों के पेयजल श्रोत गायब हो गये हैं। यह नागरिकों के जीने के सर्वोच्च मानवाधिकार का हनन है।

इन दुष्प्रभावों के बावजूद स्थानीय लोगों पर जमीने बेचने के लिए कंपनियों व सरकारों के द्वारा बहुत दबाव डाले जाते हैं। डराया-धमकाया भी जाता है और लालच भी दिया जाता है। परियोजना से होने वाली हानियां नहीं बताई जातीं, केवल लाभ के सब्जबाग ही दिखाये जाते हैं। रोजगार व नौकरी का लोभ इनके सामने सबसे बड़े आकर्षण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह रोजगार कितने समय का ? इस प्रकार धोखे का खेल कंपनियां करती हैं और सरकार उनका साथ देती है।

इसी भ्रम के कारण आज महिलाओं के घोर विरोध के बावजूद समुदाय अपनी भूमि को बांध कंपनियों को ऊँचे दाम पर बेचने को उत्सुक है। पहाड़ की महिला का घरेलू बजट, पशु के लिये मिलने वाले चारे, ईंधन और खेत की उपज पर टिका हुआ है। उन्हें पुरुषों की इस अल्पदृष्टि से विचलित नहीं होना चाहिये। ऐसा निर्णय लेना चाहिये, जिसमें जनहित हो। सरकार को चाहिये कि पुरुषों को सही दिशा दे, न कि उनकी बेवकूफी का लाभ उठा कर उनके परिवारों को बर्बाद होने दे।

देश, सरकार एवं जनता सभी को विकास चाहिये, किन्तु उचित कीमत पर..... न कि पानी में आक्सीजन की कमी करके, बालू, पत्थर, चारागाह, उपजाऊ भूमि को नष्ट करके भूस्खलन और नदी की मूल प्रवृत्ति से छेड़छाड़ करके। उत्तराखण्ड के मुख्यमंत्री को चाहिए कि वे विकल्पों पर विचार करें। ऊर्जा की उत्तरोत्तर अधिक खपत से ही विकास को पारिभाषित नहीं करना चाहिये, अन्यथा सिंधु घाटी जैसा विनाश फिर दोहराया जायेगा।

नदियों की जीवंतता का नदी की आजादी के साथ गहरा रिश्ता है। जब हम नदियों की आजादी छीनते हैं, तो नदियां भी लाचार हो जाती हैं। एक लाचार इंसान की तरह वे भी लाभ-हानि का अंतर भूलकर लाचारी में बाढ़-सुखाड़ में बदल जाती हैं। रन ऑफ रिवर बांध भी नदियों को बीमार और लाचार बनाकर सिकुड़ने और मरने-मारने को मजबूर कर रहे हैं।

ग्लोबल वार्मिंग

समाधान : ऊर्जा कुशलता या खपत में बचत?

प्रकृति से प्यार और लेन-देन में अनुशासित रहना अब कम्पनियों की प्राथमिकता नहीं है। अभी तो इन्होंने लूटकर ही लाभ कमाना सीखा और सिखाया है। सिर्फ लाभ सोचने वाले ग्लोबल वार्मिंग नहीं रोक सकते हैं। ऊर्जा कुशलता से थोड़ा रूप और व्यवहार बदल सकते हैं। ग्लोबल वार्मिंग ठीक करने का काम बड़ी कम्पनियों की प्रबंधकीय कुशलता से नहीं, प्रकृतिमय व्यवहार और मानवीय संस्कार से संभव है। जिन देशों में ऐसा हुआ है, वे ही देश पर्यावरणीय हानि कम कर सके हैं।

दुनिया में आज तकनीक और इंजीनियरिंग कुशलता बढ़ाकर प्रकृति का शोषण किया जा रहा है। जब हम कुशलता बढ़ाते हैं, तो शोषण भी बढ़ता है। शोषण तो ब्रह्मांड को बिगाड़ता है। ऐसे बिगाड़ से सामाजिक असमानता बढ़ती है।

आर्थिक सलाह देने वाली विश्व की प्रसिद्ध कम्पनी मैकेन्जी ने कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लिये ऊर्जा कुशलता में सुधार पर जोर दिया है। आर्थिक विकास की प्रक्रिया में ऊर्जा का अधिकाधिक प्रयोग होता है, जैसे स्टील के निर्माण में लोहा गलाने के लिये। ऊर्जा के प्रमुख स्रोत कोयला एवं तेल हैं। इन पदार्थों को जलाने से कार्बन डाइ ऑक्साइड का उत्सर्जन होता है

जिससे धरती का तापमान बढ़ रहा है। तापमान में यह वृद्धि अनिष्टकारी हो सकती है, परिणामस्वरूप ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्र के जलस्तर में वृद्धि से मुम्बई एवं न्यूयार्क जैसे शहर डूब सकते हैं। सूर्य की हानिकारक किरणों के शरीर में प्रवेश से रोग बढ़ सकते हैं; तापमान में वृद्धि के कारण फसलों की उपज कम हो सकती है.... आदि-आदि।

इन दुष्प्रभावों से बचने के लिये मैकेन्जी ने सुझाव दिया है कि ऊर्जा के उपयोग की कुशलता में सुधार करना चाहिये। वर्तमान में एक टन कार्बन उत्सर्जन से हम 740 डॉलर की आय हासिल कर रहे हैं। मैकेन्जी ने अनुमान लगाया है कि यदि एक टन कार्बन से 7300 डॉलर की आय हासिल कर ली जाये, तो कुल कार्बन उत्सर्जन को सन् 2050 में 85 गिगाटन से घटाकर 20 गिगाटन के स्तर पर लाया जा सकता है। इस कुशलता को हासिल करने के लिये मकानों एवं उद्योगों के इन्सुलेशन में सुधार, ज्यादा औसत देने वाली गाड़ियों का उपयोग, गन्ने से बने एथनाल का उत्पादन, सौर ऊर्जा से पानी गर्म करना एवं जंगलों को बचाने जैसे उपायों को शीघ्र लागू करना होगा।

मैकेन्जी ने यह भी बताया है कि कार्बन उत्सर्जन पर नियंत्रण करने में विकासशील देशों की विशेष भूमिका रहेगी। ऊर्जा की मांग में कटौती का 26 प्रतिशत हिस्सा अमरीका, यूरोप एवं जापान का होगा। शेष 74 प्रतिशत कटौती का हिस्सा चीन, रूस, अरब देशों एवं भारत समेत दूसरे विकासशील देशों का होगा।

इस आकलन के प्रति मुझे गंभीर संदेह है।

विश्व बैंक के आंकड़ों के अनुसार गरीब देशों द्वारा सन् 1990 में कार्बन उत्सर्जन 10.6 अरब टन था, जो 2003 में 12.6 अरब टन हो गया। इसी अवधि में अमीर देशों द्वारा कार्बन उत्सर्जन 10.6 से बढ़कर 12.7 अरब टन हो गया। जाहिर है कि गरीब और अमीर देशों का कार्बन उत्सर्जन में हिस्सा बराबर है और समानान्तर गति से बढ़ रहा है। तथापि प्रति व्यक्ति के हिसाब से गरीब देश पिछड़ रहे हैं; चूंकि उनकी जनसंख्या बढ़ रही है। इस अवधि में गरीब देशों में प्रति

व्यक्ति कार्बन उत्सर्जन 2.8 टन के स्तर पर बना हुआ है, जबकि अमीर देशों में यह उत्सर्जन प्रति व्यक्ति 11.8 टन से बढ़कर 12.8 टन हो गया है।

ऐसी परिस्थिति में कार्बन उत्सर्जन कम करने का ज्यादा दायित्व अमीर देशों पर है। जैसे घर में आटे की किल्लत हो, तो दस रोटी खाने वाले पर ज्यादा दबाव बनाना चाहिये, न कि दो रोटी खाने वाले पर। परन्तु मैकेन्जी का मूल उद्देश्य पश्चिमी अमीर देशों के हितों को बढ़ाना है। इसीलिये कम्पनी कहती है कि दो रोटी खाने वाले के भोजन में 74 प्रतिशत की कमी करें और दस रोटी खाने वाले तन्दुरुस्त बालक के भोजन में केवल 24 प्रतिशत की कटौती की जाए।

मैकेन्जी ने अनुमान लगाया है कि उपयोग की कुशलता को हासिल करने के लिये किये गये खर्च से विश्व की कुल आय में मात्र एक प्रतिशत की कमी आयेगी। निश्चित रूप से पृथ्वी को ग्लोबल वार्मिंग के दुष्प्रभावों से बचाने के लिये यह बहुत छोटी रकम है। परन्तु प्रतिस्पर्धा के इस युग में गरीब देशों के लिये एक फीसदी कटौती भी भारी पड़ सकती है।

भारत जैसे विकासशील देशों पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों को मैकेन्जी चतुराई से छुपा जाता है। ''कार्बन उत्पादकता की चुनौती'' शीर्षक युक्त रपट में कहा गया है कि ''विकासशील देशों को यह निवेश करने में ज्यादा कठिनाई होगी। उन्हें अपनी वर्तमान खपत में कटौती करनी होगी। फिर भी चीन तथा तेल निर्यातक देशों के लिये खपत में कटौती करना जरूरी नहीं होगा। इसलिये वैश्विक स्तर पर कार्बन उत्सर्जन में कटौती करना संभव है।'' उद्धरण को ध्यान से देखें। कहा गया है कि चीन और तेल निर्यातक देशों द्वारा यह निवेश सरलता से किया जायेगा। इससे यह निष्कर्ष कदापि नहीं निकलता है कि भारत इस निवेश को कर सकता है। इन विकासशील देशों का कार्बन में कटौती का हिस्सा 40 प्रतिशत बताया गया है। यानी विकासशील देशों की समस्या को अनदेखा करके मैकेन्जी कम्पनी ऐसा जता रही है कि वैश्विक स्तर पर यह संभव है। जैसे कहा जाये कि गांव के लिये कपड़े की खपत में 50 प्रतिशत कटौती संभव है और यह न देखा जाये कि एक साड़ी पर जीवित रहने वाली महिला क्या करेगी?

मैकेन्जी कम्पनी एक और भ्रम पैदा करती है। रपट में कहा गया है कि ऊर्जा की उत्पादकता में वृद्धि उसी तरह है जैसे औद्योगिक क्रान्ति के समय श्रम उत्पादकता में हुई थी अथवा जैसे अमरीका ने हाइवे, विद्युतीकरण आदि में निवेश किया था। परन्तु विषय में बुनियादी फर्क है। श्रम की उत्पादकता में सुधार होने एवं हाइवे बनने से लोगों की आय में वृद्धि होती है, जबकि कार्बन उत्सर्जन पर नियंत्रण करने पर आय में गिरावट आती है। मैकेन्जी कम्प्यूटर में निवेश की बराबरी फाइव स्टार होटल की पार्टी से कर रहे हैं।

एक और समस्या है। माना गया है कि ऊर्जा के उपयोग में कुशलता आने से ऊर्जा का कुल उपयोग कम होगा, जैसे उन्नत चूल्हे पर खाना बनाने से लकड़ी का उपयोग कम होता है अथवा हाइब्रिड कार से आफिस जाने में तेल कम लगता है। परन्तु यह जरूरी नहीं है कि इन सुधारों से ऊर्जा की कुल खपत में कमी आये। देखा जाता है कि जिन घरों में माइक्रोवेव ओवन में भोजन बनाया जाता है, उनके द्वारा कुल ऊर्जा की खपत ज्यादा होती है। चूंकि माइक्रोवेव वाले घरों में एयर कंडीशनर, गीजर आदि का भी उपयोग होता है। माइक्रोवेव से जितनी ऊर्जा की बचत होती है, उससे ज्यादा खपत दूसरे उपकरणों द्वारा हो जाती है।

आस्ट्रेलिया की यूनिवर्सिटी न्यू साउथ ऑफ वेल्स के प्रोफेसर माइकेल मालिटर कहते हैं ''कुल खपत का सीधा फॉर्मूला है-जनसंख्या, खपत व तकनीक। तकनीक में सुधार से जो बचत होती है, वह खपत में वृद्धि होने से दब जाती है। कैलिफोर्निया में ऊर्जा-कुशल गाड़ी को प्रोत्साहन दिया गया। परन्तु इन दो लाख ऊर्जा-कुशल गाड़ियों ने कुल कार्बन उत्सर्जन अधिक किया; चूंकि लोग ज्यादा सफर करने लगे। इसी प्रकार बोइंग हवाई जहाज कम्पनी ने इंजन की ऊर्जा कुशलता में बहुत सुधार किया है, किन्तु वायुयात्रा में वृद्धि होने से यह निष्फल हो जायेगा।'' प्रश्न है कि प्राथमिकता क्या है - ऊर्जा की कुशलता बढ़ाना या खपत की संस्कृति में घटोत्तरी? मेरी समझ से खपत की संस्कृति में घटोत्तरी प्राथमिक है। यदि लोग एयरकंडीशनर के स्थान पर पंखे से काम चलाने लगें, तो पंखे की अकुशलता के बावजूद कुल कार्बन उत्सर्जन में कमी आयेगी। खपत में बचत की संस्कृति अकेले ही प्रभावी होगी, चूंकि खपत कम हो जायेगी। इसके विपरीत

ऊर्जा की कुशलता अकेले निष्प्रभावी होगी, चूंकि खपत बढ़ती जायेगी। मानव को ग्लोबल वार्मिंग से बचाने के नाम पर ऊर्जा-कुशलता को प्राथमिकता देकर एवं भोगवादी संस्कृति पर चुप्पी साधकर ये कम्पनियां धरती के पर्यावरण को विध्वंस करने का रास्ता प्रशस्त कर रही हैं।

खपत में बचत

कैसे क्या करें ?

ऊर्जा मंत्रालय की उच्च विशेषज्ञ समिति में मैं पहली बार सदस्य रहा। छः माह तक इस समिति में रहकर बहुत सी बातें देखने-समझने का मौका मिला। ऐसा लगा कि हम जरूरत पूरी करने हेतु काम नहीं करते हैं, बल्कि कुछ खास लोगों की स्वार्थपूर्ति हेतु ऊर्जा बनाने की बड़ी-बड़ी योजनायें बनाते हैं। इन योजनाओं का उद्देश्य जो प्रस्तुत किया जाता है या लिखा जाता है..... वह वास्तविक उद्देश्य नहीं होता। कुछ बड़ी कम्पनियों का मकसद भारत सरकार के साधनों व शक्तियों को अपने हित में उपयोग करना रहता है। भागीरथी-गंगा कैसे जीवित रहे? उच्च स्तरीय समिति का काम सरकार को यह बताना था। लेकिन सभी सरकारी सदस्य केवल भागीरथी की हत्या करके कैसे परियोजना का काम चले... इसी पर काम करते रहे। जब उन्हें मैंने उद्देश्य याद दिलाया तो वे बिदक गये थे। आखिर मुझे लगा मैं अपना समय क्यों बर्बाद करूं? त्यागपत्र दे दिया। लेकिन त्यागपत्र से समस्या का समाधान नहीं हुआ। तब ऊर्जा मंत्रालय को समझना शुरू किया। फिर मैंने कहा-डिमांड साइड ऊर्जा मैनेजमेंट जरूरी है।

योजना आयोग की रपट में ऊर्जा समस्या से निपटने के उपाय सुझाये गये हैं। हमें उनका स्वागत करना चाहिये और उन्हें व्यावहारिक रूप देने का प्रयास करना चाहिये। बताया गया है कि ऊर्जा उपयोग की कुशलता बढ़ाकर ऊर्जा की जरूरत को कम किया जा सकता है। अंतिम उद्देश्य ऊर्जा की आपूर्ति और मांग में संतुलन स्थापित करने का है। संतुलन, आपूर्ति बढ़ाकर या मांग सीमित करके हासिल किया जा सकता है। आयोग ने बताया है कि सीएफएल बल्ब का उपयोग, ऊर्जा के मूल्यों को उचित स्तर पर निर्धारित करना, खपत के खास घंटों

के लिए अलग दर स्थापित करने आदि से 14 करोड़ टन तेल के बराबर ऊर्जा की बचत हो सकती है। कोयले से ऊर्जा उत्पादन की कुशलता में सुधार, ढुलाई के लिये रेलवे का अधिक उपयोग एवं रोड ट्रांसपोर्ट की कुशलता से भी 14 करोड़ टन तेल के बराबर ऊर्जा की बचत हो सकती है। इस रास्ते को अपनाकर हम कोयले, हाइड्रो एवं परमाणु से ऊर्जा हासिल करने की बेबसी से उबर जाते हैं। आयोग ने अनुमान लगाया है कि परमाणु और हाइड्रो उत्पादन के विशेष प्रयास से 4 करोड़ टन तेल के बराबर ऊर्जा के उत्पादन में वृद्धि होगी।

यह विचारणीय मुद्दा है कि साफ-सुथरे डिमांड साइड मैनेजमेंट से 28 करोड़ टन की बचत को अनदेखा करके हाइड्रो एवं परमाणु से मात्र 4 करोड़ टन के उत्पादन में वृद्धि पर जोर क्यों दिया जा रहा है?

अगला विषय प्रसारण एवं वितरण में बिजली की बर्बादी का है। ऊर्जा मंत्रालय द्वारा स्थापित केन्द्रीय विद्युत प्राधिकरण ने वर्ष-2000 में प्रकाशित सर्वे में अनुमान लगाया था कि 2003-04 में बिजली की जरूरत 467 अरब यूनिट की होगी और विद्युत प्रसारण हानि 130 अरब यूनिट होगा। परन्तु 2003-04 में वास्तविक खपत इससे 29 प्रतिशत कम रही, जबकि प्रसारण हानि 24 प्रतिशत अधिक रही। निष्कर्ष निकलता है कि ऊर्जा मंत्रालय ऊर्जा की जरूरत का अनुमान बढ़ा-चढ़ा कर आंकता है। इसकी इतनी मांग न होने पर इस ऊर्जा को प्रसारण हानि के नाम पर नवम्बर 2 में बेच दिया जाता है। जाहिर है कि ऊर्जा का उत्पादन देश की जरूरत के लिये कम और नौकरशाही द्वारा नवम्बर 2 में बिक्री के लिये ज्यादा किया जा रहा है। अतः देश की जरूरत को कसौटी पर कस कर ही हाइड्रो एवं परमाणु ऊर्जा के उत्पादन पर विचार होना चाहिये। मेरे अनुसार ऊर्जा सुरक्षा हेतु डिमांड साइड मैनेजमेंट का सहारा लेना चाहिये न कि नये परमाणु और हाइड्रो प्रोजेक्ट शुरू किए जायें।

नई हाइड्रो परियोजनाओं को अब भारत सरकार ने रोकना शुरू किया है। लोहारी नागपाला परियोजना कार्य स्थागित कर दिया गया है। नये हाइड्रो बैराज अब भागीरथी पर नहीं बनेंगे। ऐसा निर्णय भी केन्द्रीय ऊर्जा मंत्री ने हमारे साथ चर्चा करके तय किया है।

लोकतंत्र में लोक की जीत होती है। लेकिन हाइड्रो ऊर्जा वैज्ञानिक और इंजीनियर लोक की सुनते ही नहीं हैं। तंत्र को चुनाव के समय लोक के पास जाना पड़ता है। तब ही वह लोक की सुनता है। लेकिन इन्हें अपने इंजीनियरों की चालों को भी समझना चाहिए। वे नई परियोजनाओं में क्यों रुचि रखते हैं ? पुराने अधूरे कार्यों को अच्छे से चलाने में रुचि क्यों नहीं रखते ? अब तो ऐसा लगता है कि मंत्री भी इंजीनियरों की चाल के हिस्से बन जाते हैं।

मंत्री भी जन दबाव को देखकर ही रास्ते पर आते हैं। नदियों की रक्षा हेतु जन दबाव बनाना बहुत ही टेढ़ी खीर है। समझना चाहिए कि नदी निजी व्यक्तिगत लाभ की नहीं है। नदी साझा भविष्य, जमीर व गौरव है। इसे सिर्फ जीविकोपार्जन का स्रोत मानने वाले स्वार्थ पूर्ति का साधन मानते हैं। इसलिए डिमांड साइड मैनजमेंट पर संवाद खड़ा नहीं होता है। समाज और सरकार आज नदियों को जीवित रखने पर संवाद चलाये, तो डिमांड साइड मैनजमेंट अपने आप शुरू हो जायेगा।

जैव विविधता

समृद्धि से रुकेगा ग्लोबल वार्मिंग का दुष्प्रभाव

भागीरथी व उसकी सहायक नदियां मन्दाकिनी, अलकनन्दा, भिलांगना, यमुना व उसकी सहायक टौंस रूपिन, सुपिन आदि ग्लेशियरों ''हिमानियों'' से निकलने वाली नदियों के सामने संकट है कि उनके उदगम वाली हिमानियां तेजी से पिघल रही हैं और प्रतिवर्ष पीछे खिसकती जा रही हैं। इनकी पीछे खिसकने की गति प्रतिवर्ष तीव्रता से बढ़ती जा रही है। आज दशकों बाद ही सही वैज्ञानिक कहने लगे हैं कि यदि इनके लिए कुछ नहीं किया गया तो हिमानियां पूरी तरह समाप्त हो जायेंगी।

अतः उत्तराखण्ड हिमालय के वातावरण को अपेक्षाकृत शीतल बनाना बहुत आवश्यक है, ताकि ग्लेशियरों पर बढ़ती गर्मी की गति धीमी हो सके।

हम यह जानते हैं कि चीड़ के जंगल की तुलना में चौड़ी पत्ती के जंगल (हिमालय के स्थानीय वृक्षों, बांज ''ओक'' बुराश, उतीस आदि) बहुत ठंडे होते हैं। परन्तु

सरकार की वननीति पर्यावरण जल सवंर्द्धन की नीति न होकर व्यावसायिक वननीति है। अतः चीड़ के वृक्षों को पैसा कमाने की दृष्टि से अधिक महत्व दिया जाता है। पर अब जब नदियों के लुप्त होने के लक्षण दिख रहे हैं, ऐसे में हमारी वननीति व्यवसाय प्रधान या रुपया कमाने के साधन के रूप में नहीं, वरन् गंगा जैसी जीवन रेखा, को बचाने की होनी चाहिए। रुपया और पानी में से पानी को चुनना होगा।

इसके लिए उत्तराखण्ड के पर्वतों की चोटियों को ऊपर से डेढ़ या दो किलोमीटर नीचे तक चौड़ी पत्ती के वनों से आच्छादित कर देना होगा। ताकि ऊपर बरसने वाला वर्षा जल धरती के भीतर जा सके। चौड़ी पत्ती के वृक्षों की छाता व उसके नीचे बिछी पत्तियां वर्षा की एक-एक बूंद को रोक कर भूमि को भीगने देती हैं। जबकि चीड़ के जंगलों से वर्षा का पानी सीधे बहकर चला जाता है। अतः चीड़ के वनों को घटाते जाना व चौड़ी पत्ती विशेषकर बांज वृक्ष के जंगलों को बढ़ाना एक मात्र तरीका है। उत्तराखण्ड सरकार व केन्द्र सरकार द्वारा वननीति में परिवर्तन करके निरन्तर काम करने से यह समस्या हल हो सकेगी; अन्यथा 'गंगा' नाम तो रह जायेगा, पर उसका वह अद्भुत गुणात्मक पवित्र जल नहीं रहेगा।

बांज वृक्ष व चौड़ी पत्ती के वनों की यह भी गुणवत्ता है कि वे वायुमण्डल में नमी फेंकते हैं, जबकि चीड़ के जंगल वायुमण्डल को गर्म व रूखा करते हैं। उसकी घर्षण प्रवृति धरती व वायु दोनों को हानि करती है। वायुमण्डल में नमी होगी, तो आकाश में उमड़ने वाले बादल हमारे हिमालय पर झुकेंगे व बरसेंगे।

वर्षा की मात्रा पिछले कुछ दशकों में कम हुई है। इसलिए भी नदियों में जल प्रवाह घट रहा है। यदि वायुमंडल व धरती पर नमी व शीतलता बढ़ेगी, तो ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को कम करने का यह एक कारगर तरीका भी होगा। गंगा मइया के पास भरपूर जल हो, तो सामान्य प्रदूषण को शुद्ध करने की शक्ति स्वयं उसमें विद्यमान है। परन्तु उसका जल प्रवाह घट जाये अथवा बाधित कर दिया जाये और प्रदूषण का अतिरिक्त भार दिन-प्रतिदिन बढ़ता जाये, तब गंगा को बचाना दुष्कर हो जायेगा।

हिमालय क्षेत्र में गंगा का जन्म ही नहीं हुआ, बल्कि अपनी कैशोर्यावस्था तर गंगा भी हिमालय क्षेत्र में ही उमंग, सुंदरता व पौष्टिकता हासिल करती है। यह वह क्षेत्र है, जहां गंगा के जल की गुणवत्ता का सृजन होता है। अतः यहां के पर्यावरणीय या पारिस्थितिकीय तंत्रों को सन्तुलित रखने हेतु राष्ट्रीय महत्व का कार्यक्रम तय किया जाना चाहिए।

हम से पूरे हिमालय क्षेत्र के लिए एक अलग विकास नीति बनाने की जोरदार वकालत करते हैं। क्योंकि हिमालय का जल, जंगल, जमीन व्यावसायिक बनाने के लिए नहीं, बल्कि पूरे उत्तर भारत व बांग्लादेश तक के सम्पूर्ण क्षेत्र की जलवायु और जन जीवन को समृद्ध व सन्तुलित रखने के लिए है।

भारत की आदिवासी संस्कृति दुनिया की कम्पनियों को सीख दे सकती है। विकसित कहलाने वाली कम्पनियां और देश भारतीय जीवन पद्धति के सिद्धान्त को अपनाएं- 'प्रकृति से इतना ही लेना जितने में जी सकें।' पश्चिम के विकसित देशों को मैकन्जी कम्पनी यह नहीं समझाती है। क्योंकि अधिक लेन-देन व कुशलता विकसित करने में उनका लाभ है, जो अन्य के लिए अशुभ है। भारतीय जीवन में शुभ और लाभ का समान रूप से गहरा संबंध है। मैकेन्जी को अपने लाभ में शुभ की चिंता नहीं है। इसलिए वह कुशलता में समाधान ढूंढती है।

कंपनी जीवन हेतु प्रकृति से लेन-देन में अनुशासित नहीं है। गरमाते ब्रह्मांड और मौसम के मिजाज को दुरुस्त करना अनुशासित और मर्यादित रूप में ऊर्जा की खपत में बचत से ही संभव है। राजस्थान का समाज अपने वर्षा-जल को रोककर जमीन में नमी बनाकर हरियाली लाया लेकिन ऊर्जा का उपयोग करके उसने धरती का पेट पानी से खाली नहीं किया। परिणामस्वरूप भूजल भण्डार भरा और मरी हुई नदी सदानीरा बन गई। नमी से खेती और हरियाली बढ़ी, तो वातावरण से कार्बन खींच पर हरियाली अपनी जड़ों, तनों, डालियों और पत्तों में एकत्र कर ली। अब यहां का मौसम इतना नहीं गरमाता है; न ही बादल फटते हैं क्योंकि कार्बन तो पेड़ों और वनस्पतियों में बदल गया है।

बाढ़ नियंत्रण

समाधान : तटबंध या कुछ और?

गंगा समेत देश की अन्य नदियों में आने वाले उफान यदा-कदा बाढ़ के परिदृश्य उत्पन्न करते ही रहते हैं। हमारी सरकारें इसे एक चुनौती मानकर कुछ न कुछ उपाय करती ही हैं। पिछले 100 वर्षोंके बाढ़ नियंत्रण इतिहास को देखें तो स्पष्ट होता है कि सरकारी इंजीनियरों ने तटबंधों को बाढ़ नियंत्रण का स्थाई समाधान मान लिया है। भारत के प्रथम राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद ने बिहार की कोसी नदी तटबंधों की नींव रखी थी, तब इंजीनियरों ने यही दावा किया था कि कोसी की बाढ़ रुक जायेगी। इलाका सुखी और समृद्ध हो जायेगा। हुगली को बांधते वक्त भी यही तर्क था और नदी जोड़ परियोजना को मंजूरी देते वक्त भी यही तर्क। इसी तर्क को आधार बनाकर उत्तर प्रदेश में गंगा के उत्तरी तट पर नरोरा से लेकर बलिया तक गंगा एक्सप्रेस-वे नाम की आठ लेन और 7.8 मीटर ऊंची सड़क गंगा नदी भूमि पर ही प्रस्तावित है। हालांकि इससे गंगाजल और गंगा किनारे की भूमि व आबादी को लेकर जो संकट उत्पन्न होगा, उसके संबंध में प्रमाणिक वैज्ञानिक आधार हैं। उत्तर प्रदेश सरकार को इससे अवगत भी कराया जा चुका है। यूं तटबंधों के कारण कोसी की आपदा और कोसी के तटबंधों में फंसी आबादी की दुर्दशा कौन नहीं जानता। इस बार कोसी नदी ने अपने प्रवाह मार्ग को जिस तरह बदला, उससे तटबंधों की दुष्परिणामों पर अब कोई शंका नहीं होनी चाहिए। बावजूद इसके मेट्रो रेल के मुखिया श्री ई.श्रीधरन ने न जाने किस बेसमझी में दिल्ली की यमुना को टेम्स की भांति दीवारों में बांधने की बात उछाल दी है। वह भूल गए हैं कि परदेस की टेम्स और देश की यमुना में फर्क है।

खैर! मूल तथ्य यह है कि कोई भी इंजीनियर किसी नदी की बाढ़ को कितना नियंत्रित कर सकता है। क्या बाढ़ को पूरी तरह रोका जा सकता है ? क्या बाढ़ को पूरी तरह रोका जाना चाहिए ? नहीं! न तो बाढ़ को पूरी तरह

रोका जाना संभव है और न ही ऐसा किया जाना चाहिए। जरूरत है तो सिर्फ इतनी कि बाढ़ की तेजी और उससे होने वाले विनाश को कैसे नियंत्रित किया जाये। बाढ़ के मूल कारण, उसकी तेजी और विनाश के कारकों को बढ़ाने वाले बिन्दुओं पर विचार करके ही यह संभव है।

पहाड़ी क्षेत्र में लगातार होते भूस्खलन, वनों के कटान, छोटी वनस्पति के ह्रास, बांधों के कारण गाद में वृद्धि, नदियों के तल का ऊपर उठना, नदी तट भूमि के कटान व अतिक्रमण जैसे कारण नदी की बाढ़ की तेजी को बढ़ाते है। वरना नदियों की स्वाभाविक बाढ़ थोड़े-बहुत कष्ट तो देती है, लेकिन बाढ़ का पानी जितनी जमीन पर जाता है, उसे उपजाऊ और सरसब्ज बनाता है। हुगली तट के बुजुर्ग मछुआरे आपको यह सीख बता सकते हैं।

बिहार की नदियां नेपाल से निकल कर तेजी से बहती हैं। इनके पानी में भारी मात्रा में सिल्ट या गाद बहकर आती है। पूर्व में ये नदियां स्वच्छन्द बहती थीं। चूंकि पानी का फैलाव बना रहता था। अतः पानी का स्तर नहीं चढ़ता था; इसलिए बाढ़ का पानी अपने साथ लायी गयी सिल्ट को चारों ओर खेतों में छोड़ देता था। ऐसा पानी खेतों को उपजाऊ बनाने में सहायक था। यूं इससे उनके मकान डूब जाते थे। मवेशी मरते थे। बच्चों की पढ़ाई प्रभावित होती थी। रोजगार ठप्प हो जाते थे; लेकिन कष्ट थोड़े दिन का था, लाभ अधिक दिन का।

पिछले सौ वर्षों में अनेक नदियों के किनारे हमने तटबंध बना दिये हैं। तटबंध बनने से सामान्य वर्षो में जनता को सुकून मिलता है और उनकी दिनचर्या प्रभावित नहीं होती है। हल्की बाढ़ आने पर तो पानी खुरामा-खुरामा बंधों के बीच सिमट कर चलता रहता है। शेष इलाकों में जनजीवन भी सामान्य बना रहता है; किन्तु बाढ़ ज्यादा आने पर पानी बंधे को तोड़ता हुआ एकाएक फैलता है। कभी-कभी इसका प्रकोप इतना भंयकर होता है कि यह 12 घंटे में ही 10-12 फीट बढ़ जाता है और जनजीवन एकाएक अस्त-व्यस्त हो जाता है। उस हालत में मवेशियों को सुरक्षित स्थान पर पहुंचाना और अपना ठौर ठिकाना खोजना सम्भव नहीं होता। परिणाम भंयकर होता है। कोसी के तटबंधों ने एकबार फिर यह दिखा दिया।

दरअसल तटबंधों को बनाने से सिल्ट फैलने के स्थान पर बंधों के बीच जमा हो जाती है। इससे बंधे के क्षेत्र का स्तर उंचा हो जाता है। जैसे जन्माष्टमी की झांकी सजाने के लिए पक्की फर्श पर इंटें रखकर नदी बनाई जाती है, उसी तरह समतल इलाके में नदी का पाट बगल की भूमि से ऊंचा हो जाता है। जब तटबंध टूटता है, तो यह पानी वैसे ही तेजी से फैलता है, जैसे मिट्टी के घड़े के टूटने पर पानी। दो नदियों पर बंधे बनाने से बीच का 50 या 100 किलोमीटर क्षेत्र कटोरानुमा आकार धारण कर लेता है। बांध टूटने पर पानी इस कटोरे में भर जाता है और इसका निकलना मुश्किल हो जाता है। इससे बाढ़ का प्रकोप शांत होने में काफी समय लग जाता है। पूर्व में बाढ़ धीरे-धीरे बढ़ती थी और कम टिकती थी। अब बाढ़ अचानक बढ़ती है और अधिक टिकती है। पूर्वी उत्तर प्रदेश के लोग धान की ऐसी प्रजातियां बोते थे, जो बाढ़ के पानी के साथ-साथ बढ़ती जाती थीं। तटबंधों का यही नुकसान है। बाढ़ में भी वे धान उपजा लेते थे। तटबंध बनाने से ऐसी खेती संभव नहीं है।

तटबंध टूटने का एक दुष्प्रभाव यह है कि जब पानी फैलता है, तो वह भारी मात्रा में मोटी बालू को खेतों में छोड़ देता है। इससे खेतों की उर्वरता समाप्त हो जाती है। तटबंध के अभाव में जल फैलाव से आयी गाद खेतों को उपजाऊ बनाने के साथ-साथ भूमि के स्तर को ऊंचा बनाती थी। गंगा घाटी के अनेक क्षेत्र सैकड़ों वर्षो तक गाद जमा होने से निर्मित हुए हैं। बंधे बनाने से गाद का फैलाव रुक जाता है। यह तटबंध के बीच में रस्से की भांति जम जाती है और विस्तृत भूमि का स्तर नहीं बढ़ता है।

वैज्ञानिकों का अनुमान है कि ग्लोबल वार्मिंग से समुद्र का जल स्तर बढ़ सकता है। बंगाल के अनेक क्षेत्रों के समुद्र में डूबने की आशंका जताई जा रही है। गाद खुलकर बहने से बंगाल की भूमि का स्तर ऊंचा उठ सकता था और इस खतरे से कुछ राहत मिल सकती थी।

नरेन करुणाकरण बताते हैं कि 1954 में बिहार में 160 किलोमीटर तटबंध थे और 25 लाख हैक्टेयर भूमि बाढ़ से प्रभावित थी। वर्तमान में 3,430 किलोमीटर तटबंध बनाये जा चुके हैं, परन्तु बाढ़ से प्रभावित भूमि घटने के

स्थान पर बढ़कर 68 लाख हैक्टेयर हो गयी है। जाहिर है कि तटबंध बनाने की वर्तमान पद्धति कारगर नहीं है। ये तटबंध भी प्राधिकरण के समक्ष एक बड़ी चुनौती ही यह है कि वह बाढ़ नियंत्रण की तटबंधीय प्रणाली और अवधारणा को नकार कर वैकल्पिक तरीके से बाढ़ और बाढ़ की गति को नियंत्रित करे। जब और जहां बाढ़ आती है, वहां पूर्व राहत की तैयारी का संकल्प विनाश में बचाव का रास्ता हो सकता है। क्या सचमुच यही रास्ता है। गंगा नदी घाटी प्राधिकरण को इस पर नीतिगत दृष्टि बनानी होगी। संभव है पाल-ताल-झाल के हमारे देशज अनुभव प्राधिकरण को कुछ रास्ता दिखा सके।

पाल-ताल-झाल में सुरक्षित है बाढ़-सुखाड़ के इलाज का नुस्खा

बाढ़ से पहले पाल बांधने वाला समाज आज बांधों की भंवर में फंस गया है। इसीलिए बिहार का तैरने वाला समाज अब डूबने लगा है। सूखे को झेलने वाला बाड़मेर भी बाढ़ की चपेट में डूब रहा है। सामुदायिक जल प्रबंधन बाढ़ और सुखाड़ की बढ़ती मार का इलाज है। कभी वर्षा की बूंदों को सहेजने के लिए वर्षा आने से पहले अपने घर की छत पर झाड़ू लगाकर रखा जाता था, ताकि वर्षा की बूंदें छत के कुंड में साफ-सुथरे तरीके से इकट्ठी हो सकें। बारिस व गांव के पानी को ताल में रोककर खेती और घरेलू जल की जरूरतों को पूरी करने का काम करता था। खड़ीन का पानी पीने की जरूरत और अन्य उत्पादन में मदद करता था। ये ताल-पाल सूखे की मार से और बाढ़ की चपेट से समाज को बचाकर रखते थे। आज हम इस तरह के सामुदायिक जल प्रबंधन को भूलकर राज्य या भारत सरकार के बनाए बांधों की ओर देखने लगे हैं। ये बांध नदियों को बांधकर सिर्फ नदियों की हत्या ही नहीं करते हैं, ये सिंचित-असिंचित गांव और शहरों के बीच विवाद भी बढाते हैं। इनसे जमीन कटाव और जमाव का संकट भी पैदा होता है।

इसका एक संभावित हल यह है कि तटबंधों के स्थान पर ताल-पाल-झाल बनाये जाये। बाढ़ आने पर नदी अक्सर नया रास्ता बना लेती है। जैसा कि कोसी

ने 160 किलोमीटर हट कर किया है। ऐसे में नदी को नये रास्ते पर बहने दिया जाये और नदी के जलग्रहण क्षेत्र में जहां पानी दौड़ता है, वहां उसे चलना सिखाने हेतु छोटे-छोटे एनीकट, चैकडेम बनाए जाएं। जिससे पानी धरती के पेट को भरके और नदियों को समय-समय बहने वाली बना दे। नदी को पुराने बंधों के बीच जबरन बहने के लिए मजबूर किया जाये। तब तटबंधों के बीच नदी के पाट का स्तर ज्यादा नहीं बढ़ेगा। यूं समझिये कि दो नदियों के बीच का क्षेत्र कटोरानुमा आकार के स्थान पर थाली के आकार का बनेगा। इस प्रकार गतिशील बंधे बनाने से दो समस्याओं से आंशिक राहत मिल जायेगी। नदी का पाट खुले खेतों से ऊंचा नहीं होगा। बांधों को लगातार ऊंचा नहीं करना पड़ेगा। बाढ़ का प्रकोप कुछ कम हो जायेगा। जल भराव के निकलने के रास्ते में भी अवरोध कम होगा।

बाढ़ नियंत्रण के तीन विकल्पों का तुलनात्मक अध्ययन किया जाना चाहिए। पहला विकल्प-ऊंचे और स्थाई बंधे बनाने की वर्तमान नीति का है। इससे बाढ़ आने पर प्रकोप ज्यादा होता है। दूसरा विकल्प गतिशील ताल-पाल-झाल बनाने का है। इससे भीषण बाढ़ का प्रकोप कम होगा। तीसरा विकल्प-प्रकृति प्रदत्त बाढ़ के साथ जीने के लिए लोगों को सुविधा मुहैया कराने का है।

जल संसाधन मंत्रालय के 2001-02 के परफॉर्मेंस बजट में बताया गया था कि बाढ़ सुरक्षा के लिए ऊंचे सुरक्षा स्थलों का निर्माण, सुरक्षित संचार एवं पीने के पानी की व्यवस्था आदि की योजना बनाई जा रही है जिससे लोग बाढ़ के साथ जीवित रह सकें। सरकारों को चाहिए कि तीनों विकल्पों का तुलनात्मक अध्ययन कराये और अंधाधुध बांध बनाने और उन्हें उत्तरोतर ऊंचा करते जाने की वर्तमान नीति पर रोक लगाये। अब धरती के ऊपर बड़े बांधों से अति गतिशील बाढ़ का प्रकोप बढ़ने लगा है। इसे रोकने के लिए जल को अविछिन्न धारा के रूप में चलाना सिखाना है। यह काम सतही जल को अधोभूजल व भूजल के भंडारों में प्रवाहित करने से भी हो सकता है लेकिन ऊपर जहां के पानी से बाढ़ आती है, इस काम की वहीं से शरुआत करनी चाहिए। चूंकि बाढ़ और सुखाड़ एक ही सिक्के दो पहलू हैं। इन दोनों का समाधान जल का सामुदायिक जल प्रबंधन के कारगर ठांचों... ताल-पाल और झाल से संभव है।

नदी भूमि अतिक्रमण

समाधान : पहले सरकार करे त्याग

कभी भारत में नदी बचाने के लिए कुंभ के आयोजन की शुरुआत हुई थी। इन्हीं कुंभ आयोजनों में गंगा के साथ न्याय की नीति बनती थी। पिछले 12 वर्षों में नदी के साथ समाज के व्यवहार का आकलन होता था और अगले 12 वर्षों में क्या सावधानियां बरती जायें... क्या कार्य किये जाये?.... इन पर निर्णय किये जाते थे। राजा, प्रजा, संत... सभी मिलकर इसका निर्णय करते थे। सभी के लिए इन निर्णयों की पालना करना जरूरी होता था। तभी हमारी गंगा नैसर्गिक रूप में बची रहकर पूजनीय बनी रह सकी। जैसे-जैसे राजा, प्रजा और संत..... तीनों का व्यवहार बदला; नदी का स्वरूप भी बदल गया। जिन संतों को कभी गंगा को बचाये रखने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी, उन्हीं संतों के मठ और

आश्रम आज गंगा की नदीभूमि पर अतिक्रमण का प्रमाण बन गये हैं। समाज और सरकार भी इसमें पीछे नहीं है। नदी के सीने पर तक बस्तियां बसाने का काम जारी है। भूमि का लालच इतना ज्यादा है कि नदी रहे अथवा जाए..... किसी को कोई लेना-देना नहीं।

उत्तर प्रदेश में गंगा के उत्तरी तट पर नरोरा से बलिया तक प्रस्तावित गंगा एक्सप्रेस-वे के साथ-साथ आर्थिक जोन बनाने की घोषणा नदी क्षेत्र पर अतिक्रमण नहीं तो क्या है ? दिल्ली में आई.टी.ओ. पुल से लेकर निजामुद्दीन पुल के बीच खेलगांव परिसर और मैट्रो रेल के लिए स्टेशन व डिपो आदि का विस्तार रोके नहीं रुक रहा है। अक्षरधाम मंदिर पहले ही यमुना के सीने पर अपना साम्राज्य जमा चुका है। पटना में देखें तो गंगा भूमि पर अवैध बस्तियों के अलावा पानी निकासी की फैक्ट्रियों की संख्या बढ़ रही है। जयपुर में नदी का पाट ही गायब हो गया है। इलाहबाद, कानपुर, सुल्तानपुर...

जहां देखें, वहां नदी भूमि को सरकार और समाज कब्जाने में लगे हैं। यह चलन दिन-ब-दिन बड़े लालच का रूप लेता जा रहा है। इसके लिए भूउपयोग और मालिकाना में बदलाव करने में भी सरकारें हिचक नहीं रही। नदियों को डम्प एरिया के तौर पर इस्तेमाल करने के उदाहरणों से देश भरा पड़ा है। शहर का कचरा-मल-मूत्र..... सभी कुछ जैसे नदियों में जाने के लिए ही है। इस प्रवृत्ति के चलते हमारी नदियों का बड़ा सत्यानाश हुआ है। इस दिशा में प्राधिकरण द्वारा कोई ठोस नियम-कायदा बनाये बगैर काम चलने वाला नहीं।

जलबिरादरी द्वारा दिल्ली में यमुना पर सरकार द्वारा किये जा रहे अतिक्रमण को रोकने हेतु की गई गुजारिश के उत्तर में दिल्ली विजेता मुख्यमंत्री ने तत्कालीन लोकसभा अध्यक्ष श्री सोमनाथ चटर्जी को लिखा था कि वह इतनी कीमती जमीन को अनुपयोगी कैसे छोड़ सकती हैं। क्या नदी, जंगल, पठार, पहाड़, चारागाहों, तालाब आदि सार्वजनिक महत्व के स्थान को अनुपयोगी कहा जा सकता है ? नहीं !..... तो फिर माननीया मुख्यमंत्री को रास्ता कौन बतायेगा? गंगा नदी घाटी प्राधिकरण को ही यह कार्य करना होगा। गंगा की नदी भूमि पर उत्तर प्रदेश की मुख्यमंत्री और जे.पी.समूह की जमी निगाहों से मुक्ति भी उसे ही दिलानी होगी। यह सचमुच एक बड़ी चुनौती है।

अनियंत्रित प्रदूषण

दिन-ब-दिन फैलती कालिख

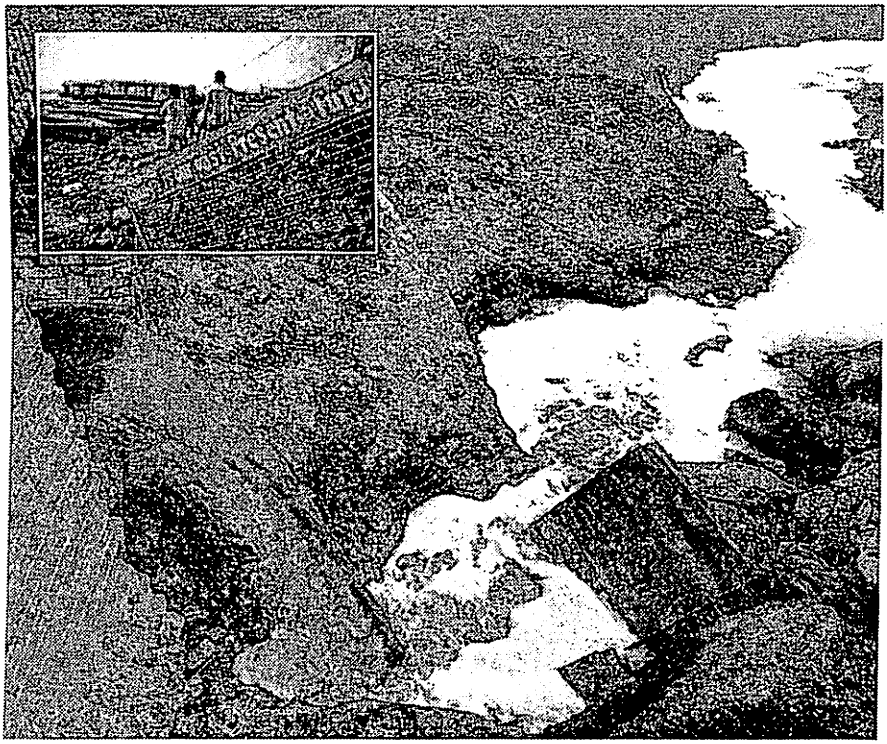

अपने मध्य प्रवाह क्षेत्र में आज गंगा का पानी आचमन तो क्या, स्नान करने योग्य भी नहीं है। गंगा कार्ययोजना में बड़े पैमाने पर निर्मित सार्वजनिक शौचालयों और मलशोधन सयंत्रों के बावजूद गंगा में कॉलीफार्म की मात्रा भयानक स्तर तक बढ़ी है। कॉलीफार्म में बढ़ोत्तरी की मूल वजह पानी में मल का मिलना होता है। हमें यह जानकर ताज्जुब हुआ कि गंगा में मिलने वाला 60 प्रतिशत प्रदूषण बिना शोधन के गंगा में जा रहा है। क्या गंगोत्री, क्या ऋषिकेश, क्या कानपुर और क्या इलाहाबाद.... सभी जगह शहर के नाले सीधे गंगा में मिलते हैं। गंगा कार्ययोजना लागू होने के इतने वर्ष बाद भी अकेले इलाहाबाद

नगर से ही 67 नाले गंगा और यमुना को प्रदूषित कर रहे हैं। मल के मिलने से गंगा सभी जगह बेहाल है। गंगा की सहायक नदियों की बदहाली गंगा की कालिख में योगदान कर रही है।

क्या सात हजार करोड़ रुपया फूंकने के बाद भी गंगा कार्ययोजना और इससे जुड़ा राष्ट्रीय नदी संरक्षण निदेशालय आज यह दावा कर सकता है कि गंगा किनारे का कोई एक शहर ऐसा है, जिसके नाले गंगा या उसकी सहायक धारा में नहीं मिलते?... या उन नालों का पानी गंगा में मिलने योग्य है ? निःसंदेह नहीं! यह जवाब गंगा कार्ययोजना की कार्य प्रणाली पर सवालिया निशान खड़े करता है।

दरअसल जल-मल शोधन का राष्ट्रीय परिदृश्य ही निराशाजनक है। आप भारत में कहीं भी चले जायें, नदियों में मिलने वाले नालों पर लगे मलशोधन संयंत्र कहीं भी पूरी तरह कामयाब दिखाई नहीं देते। ज्यादातर संयंत्र अलग-अलग वजहों से अपनी क्षमता के अनुरूप मल शोधित करने में असफल साबित हो रहे हैं। मापदंड बताते हैं कि मल शोधन के बाद शोधित जल की गुणवत्ता ऐसी होनी चाहिए कि उसमें नहाया जा सके। इसलिए इसे 'बाथिंग स्टैन्डर्ड' का नाम दिया गया है। लेकिन कोई क्या करे..... हमारे मल शोधन संयंत्रों की तकनीक इतनी घटिया और उन पर भ्रष्टाचार तथा मल.... दोनों का भार इतना अधिक है कि ये कहीं भी शोधन के बाद मानदण्डों के 10 फीसदी स्तर से अधिक गुणवत्ता का शोधित जल निष्कासित नहीं करते।

यह गंगा कार्ययोजना के वैज्ञानिकों की बड़ी तकनीकी असफलता है।

गंगा की शुद्धता की दिशा में गंगा कार्ययोजना की असफलता के चार प्रमुख कारण हैं : जनभागीदारी का अभाव, भ्रष्टाचार, जल-मल शोधन संयंत्रों पर इनकी शोधन क्षमता से अधिक मात्रा में जल-मल की आवक और शोधन संयंत्रों से निष्कासित अवजल को नदी अनुकूल बनाने के लिए जरूरी जल मात्रा व गति का नदी में अभाव।

हमने पाया कि इस बीच नगरपालिकाएं बिना किसी तकनीकी मंजूरी व अध्ययन के गंगा में आने वाले पानी को सड़क बनाकर रोकने का दावा कर अपनी पीठ

थपथपा रही है। गढ़मुक्तेश्वर इसका उदाहरण है। अनूपशहर-बिजनौर कुछ ऐसे ही प्रस्तावों को लागू कराने में जुटे हैं। गंगा में आने वाले नालों को लेकर कहीं समग्र समझ व जवाबदेही दिखाई नहीं देती। नतीजा ? गांव के गांव कैंसर, दमा, विकलांगता, किडनी व पेट के रोगी बन रहे हैं। बुलन्दशहर के गंगाजल में डॉलफिन मछलियों की संख्या कम होकर दहाई तक पहुंच गई है। बिजनौर में मगरमच्छ प्रदूषण का शिकार बनकर लगभग खत्म ही हो गये हैं। कभी कछुओं के लिए मशहूर कालाकांकर की गंगा में अब उसके दर्शन दुर्लभ हो गए हैं। अन्य छोटे जलचरों और वनस्पतियों के दर्शन की तो बात करना ही बेमानी है।

औद्योगिक प्रदूषण

बेशर्म लालच का नतीजा

प्राकृतिक रूप से गंगा का पानी हल्का क्षारीय है, लेकिन बड़े पैमाने पर हुए प्रदूषण के कारण अब कई जगह इसमें अम्लता की प्रधानता हो गई है। इसका सबसे बड़ा कारण.... औद्योगिक प्रदूषण है। हालांकि गंगा में आने वाले कुल प्रदूषण का 20 प्रतिशत हिस्सा ही औद्योगिक कचरे के रूप में है, लेकिन अत्यन्त जहरीला व रासायनिक होने के कारण औद्योगिक प्रदूषण सबसे खतरनाक अवयव है। उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले में जहरीले आर्सेनिक (संखिया) की मौजूदगी इस खतरे का स्पष्ट संकेत है।

हरिद्वार के बाद रुड़की, बिजनौर, मेरठ, गाजियाबाद, बुलन्दशहर, कन्नौज, कानपुर, फरक्का..... सब जगह फैक्ट्रियां गंगा व उसकी सहायक धाराओं में अपना कचरा डालने का काम बड़ी बेशर्मी के साथ कर रहीं हैं। रायबरेली की भवानी पेपर मिल का कचरा सीधे सई में मिलकर गंगा के कष्ट को बढ़ा रहा है। फैक्ट्रियों को कानून, समाज और भगवान की परवाह नहीं है। खासतौर से पश्चिम उत्तर प्रदेश में कागज, शराब और चीनी फैक्ट्रियां इस मामले में गुंडागर्दी पर उतर आई हैं। सिर्फ ढिकोल शुगर मिल, मवाना शुगर मिल, गोपाल मिल्क प्लांट या स्टार पेपर मिल ही नहीं..... बल्कि हर छोटी-बड़ी फैक्ट्री का यही रवैया है। मेरठ, हस्तिनापुर में बड़े पैमाने पर लगे कबेलों (मीट प्लांट) से जानवरों

का खून और मांस भी गंगा में ही बहाया जा रहा है। नरोरा से पहले अब गंगा का पानी इन्हीं कारणों के चलते, पारदर्शी और पवित्र नहीं, बल्कि दुर्गन्धयुक्त और पीला दिखाई देता है। इसकी बी.ओ.डी. भी बढ़ गई है। बी. ओ.डी. बढ़ने का मतलब है कि गंगा की सांसें चलती रहें, इसके लिए उसे अब और ज्यादा ऑक्सीजन चाहिए।

औद्योगिक प्रदूषण की दृष्टि से रुड़की से नरोरा और कन्नौज से उन्नाव तक का इलाका अतिसंवेदनशील प्रदूषक क्षेत्र है। कानपुर जलबिरादरी अध्ययन दल द्वारा तैयार रिपोर्ट इसका प्रमाण है।

कन्नौज का काला धब्बा

गंगा में नरोरा से लगभग 300 क्यूसेक पानी छोड़ा जाता है। आगे फतेहगढ़ में मानीमऊ पुल के पास काली नदी और रामगंगा का 3000 क्यूसेक प्रदूषित पानी गंगा को और प्रदूषित करता है। ऊपर से आता हल्के हरे रंग का पानी यहां आकर गहरे काले रंग वाले पानी में तब्दील हो जाता है, जिसे गंगा जल कहते हुए भी शर्म आती है। सरकारी रिपोर्टों ने भी इस बिन्दु पर बी.ओ.डी. के अत्यधिक बढ़े हुए आंकड़े के रूप में इस तथ्य को स्वीकारा है।

फर्रुखाबाद शहर का आधे से अधिक मल सीधे गंगा में जाता है। तीन मिलियन लीटर की क्षमता का एक मल शोधन संयंत्र यहां है, लेकिन बिजली का रोना रोता यह प्लांट पूरी तरह नकारा साबित हो रहा है।

यूं तो कन्नौज का इत्र दुनिया में प्रसिद्ध है, लेकिन कन्नौज.... बिठूर से जाजमऊ आते-आते गंगा का पानी इत्र की खूशबू से नहीं, बल्कि नाले जैसी दुर्गन्ध से भर जाता है।

बिठूर की आबादी 40 लाख है, फिर भी बिठूर में कोई मलशोधन संयंत्र नहीं है। इसके सातों नाले सीधे गंगा में समाते हैं। बिठूर का आनन्देश्वर घाट (परमट) शिव दर्शन के लिए प्रसिद्ध है, लेकिन यहां आकर आप काले रंग की गंगा, एक बड़े नाले से आती दुर्गन्ध और फूलों के कचरे के अलावा कुछ नहीं पा सकते।

इसके बाद तो जैसे गंगा में कचरा बहाने के लिए नालों में होड़ सी लग जाती है। जाजमऊ तक चमड़ा फैक्ट्रियों का जहर लिए 22 नाले गंगा में मिलकर गंगा का सत्यानाश करने में लगे हैं।

कानपुर में गंगा कार्ययोजना के तहत् 200 करोड़ रुपये खर्च होने के बावजूद 23 में से 22 नाले सीधे गंगा में गिरते हैं..... यानी करीब 40 करोड़ लीटर मल-मूत्र! उस पर साढे.चार सौ चमड़ा फैक्ट्रियों का कचरा गंगा में कन्नौज.... कानपुर के काले धब्बे को और बड़ा व गहरा बना देता है। कानपुर शहर का दो सौ मिलियन लीटर सीवेज तो बिना शोधन के ही सी.ओ.डी., फरक्का व अन्य नालों के जरिए सीधे पाण्डु नदी में बहाया जा रहा है। यही पाण्डु नदी ओंग के पास चोडगरा औद्योगिक क्षेत्र का कचरा और मल-मूत्र समेटती हुई फतेहपुर जिले में गंगा में जा मिलती है।

जाजमऊ से शुक्लागंज तक चमड़े को साफ कर ग्लु बनाने के लिए भट्टियां और उनका मलबा गंगा की हवा और पानी दोनों में जहर घोल रहे हैं। उन्नाव के अकेले बन्थर औद्यौगिक क्षेत्र की दो सौ से ज्यादा चमड़ा-ग्लु की फैक्ट्रियों की गंदगी ठोती लोन और कल्याणी नदियां गंगा के कष्ट को और बढ़ा देती हैं। फूलों के कचरे और प्लास्टिक की पन्नियों से गंगा पहले ही बेहाल है; इनका कचरा भी तो गंगा में ही जाता है... बची-खुची कमी लावारिस लाशें और शवदाह पूरी कर देते हैं। जहां-जहां घाट है, वहां-वहां गंगा की भूमि पर अनाधिकृत कब्जे व बस्तियां बसाने की प्रक्रिया भी तेज हुई है।

इन सबने मिलकर कन्नौज..... कानपुर के मुंह पर कालिख पोत दी है। सरकारी व सामाजिक अकर्मण्यता की वजह से इसका दंश झेलने को गंगा तो मजबूर है ही; जाजमऊ के दो दर्जन गांव भी अपनी धरती के नीचे 60 फीट गहरे तक पैठ गये क्रोमियम के जहर का संत्रास झेल रहे हैं जिनके मुंह पर गंगा की पीड़ा बढ़ाने को लेकर कालिख पुती है। गंगा के कष्ट का निदान करने के लिए भी उन्हीं को आगे आना होगा।..... अन्यथा जब-जब गंगा में प्रदूषण की बात उठेगी, कलंक का सबसे गहरा और काला धब्बा कन्नौज क्षेत्र के माथे ही लगेगा।

हर क्षण नया शिकार

गंगा में प्रतिवर्ष मिलने वाला लगभग सवा लाख टन उर्वरक व रसायन इस बात का प्रमाण है कि धरती से अधिक से अधिक हासिल करने के लालच ने सिर्फ हमारी मिट्टी और हमें ही बीमार नहीं किया, बल्कि हमारे भूजल व नदियों को भी बीमार किया है। पश्चिम उत्तर प्रदेश गन्ना और चीनी के लालच में समझ खो बैठा है। बाकी क्षेत्र भी हर साल..... अधिकाधिक यूरिया-पोटाश-कीटनाशक आदि झोंककर ज्यादा से ज्यादा उत्पादन हासिल करने में लगे हैं। सोते-जागते मन का विरोधाभास यह है कि हम अपने फल, सब्जी, अनाज में वह पुराना स्वाद व ताकत नहीं होने की बात तो करते हैं, लेकिन यह स्वीकारने को कतई तैयार नहीं है कि इसके जिम्मेदार भी हम खुद ही हैं।

दरअसल आज हम अपनी सारी जरूरतें..... सारे शौक अपनी धरती माता और प्रकृति का दोहन करके पूरा करना चाहते हैं। इस बात की किसी को कतई परवाह नहीं है कि ऐसी फसल से कमाया गया कितना पैसा हमें अपनी नदियों और बीमारी के इलाज में लुटाना पड़ रहा है। मिट्टी की उर्वरा शक्ति हर साल घट रही है। उर्वरकों के ज्यादा उपयोग से खेती ज्यादा पानी की मांग कर रही है..... खेत बंजर हो रहे हैं। इस बारे में गंगा कार्ययोजना भी खामोश है। सरकारें भी जी.डी.पी. बढ़ाने में लगी है। वह एक ओर हरित क्रांति का आह्वान कर रही है। देशी बीज और कम लागत वाली परंपरागत जैविक खेती को प्रोत्साहित और संरक्षित करने की फिक्र और फुर्सत किसी को नहीं है;.... न किसान को और न सरकार को। इसके दुष्परिणाम आगे और खतरनाक होने वाले हैं।

जो गरीब लोग नमक-प्याज से सूखी रोटी खाकर लम्बी उम्र तक तंदरुस्त रहते थे..... आज उन्हीं की पीढ़ियां घर बेचकर अपना इलाज कराने को मजबूर हैं। जिन गांवों ने कभी कैंसर, डाइबिटीज, हार्ट अटैक और किडनी की बीमारियों के नाम तक नहीं सुने थे, आज हर गांव में इन बीमारियों के शिकार जगजाहिर हैं।

जरा सोचिए! क्या आपका गांव इस संकट से बचा हुआ है ? नहीं ! तो ऐसा क्यों हो रहा है। यह भी विचारणीय है! दरअसल यही हाल आज हमारी नदियों का है।

लोगों को जीवन देने वाली गंगा आज खुद लोगों से अपने जीवन की भीख मांग रही है। यह अतिशयोक्ति नहीं... हमारी अपनी गलतियों का नतीजा है।

सामाजिक प्रदूषण

पाप धोना बन्द कीजिए

अपनी परंपराओं और संस्कारों का निर्वाह तो अच्छी बात है, लेकिन नदी में पाप धोने की बजाय अब हमें सोचना चाहिए कि क्या गंगा अब वैसी ही महाधारा है, जो कभी मात्र 22 कि.मी. चलकर अपने आप को स्वयं साफ कर लेती थी। शव पिण्डों को चन्द मिनटों में चट कर नदी को साफ रखने वाले जीव भी तो अब गंगा में नहीं बचे। इसकी गति, प्रवाह की मात्रा और गुणवत्ता..... तीनों अब बहुत कम हो गई है।

इन सब पहलुओं को ध्यान में रखकर गंगा के साथ अपने संस्कार व व्यवहार की विधियों में समाज कब सुधार करेगा ? गंगा के घाट चाहे बनारस के हों या ऋषिकेश के..... स्नानार्थियों द्वारा लाया गया कचरा गंगा को नष्ट कर ही रहा है। पुलिस वाले लावारिस लाशों और अस्पताल वाले शल्य क्रिया के कचरे को नदियों में बहा रहे हैं। शवदाह का अवशेष बड़ा प्रदूषक बन गया है। इन पर लगाम कौन लगायेगा ?

समाज कब चेतेगा ? घाटों के पंडे और धर्मगुरु कब अपनी जिम्मेदारी निभाना शुरू करेंगे ? गंगा सम्मान संवाद के दौरान ऐसे कई सवाल हमारे मन में उठे, जिनके जवाब देना जरूरी है। इनके जवाब कौन देगा.... समाज, सरकार या संत ?

भूजल शोषण

कठोर अनुशासन ही रास्ता

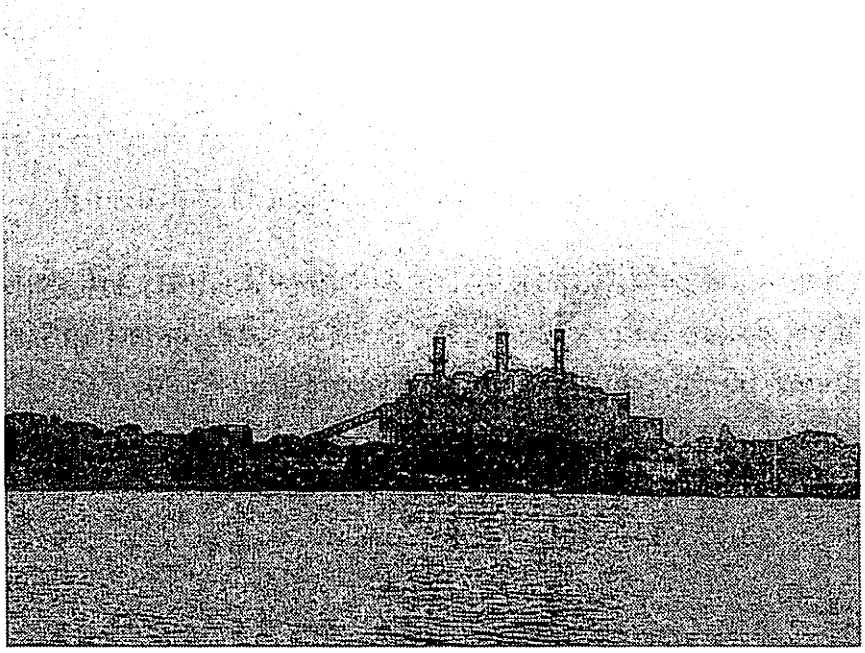

प्रदूषण के दुष्प्रभावों को और बढ़ाने में यदि कोई कारक सबसे अधिक सहायक है, तो वह है - सतही और भूगर्भीय जल का शोषण। गंगा बेसिन ही नहीं, पूरे देश में धरती से ज्यादा से ज्यादा पानी निकालने की प्रवृत्ति बढ़ी है और जल का अनुशासित उपयोग घटा है। दो राय नहीं कि गंगा तट के किसान भी अब नलकूप का मुंह खोल देने के बाद पानी की बर्बादी की परवाह नहीं करते; जबकि गंगा तट के इलाकों के भूजल स्तर में बड़ी गिरावट दर्ज की गई है। गोमती, सरयू, सई, रामगंगा, यमुना समेत ज्यादातर नदियों के किनारे अब जल संकट के नये शिकार बन रहे हैं। ताज्जुब है कि लोग इस बड़े संकट की आहट सुनकर भी अनसुनी कर रहे हैं।

सरकारी अधिकारी जब भूजल नियंत्रण की बात करते हैं, तो सबसे पहले यही आंकड़ा दिखाते हैं कि आज भारत में भूजल का जितना दोहन हो रहा है, उसका 80 प्रतिशत सिंचाई क्षेत्र में किया जा रहा है। इसी आधार पर वे जल नियामक आयोग, भूजल अधिनियम..... नलकूप व नए कुएं के लिए लाइसेंसिग आदि की वकालत करते हैं। जबकि सच्चाई यह है कि जितना पानी कई हजार एकड़ खेती में प्रति वर्ष खर्च होता है, उतना भूजल तो प्रति वर्ष कोकाकोला जैसे शीतल पेयजल का एक बड़ा प्लांट अकेले ही पी जाता है। खेती में उपयोग हुए पानी का कुछ न कुछ प्रतिशत पानी तो धरती को वापस मिल ही जाता है; लेकिन उद्योगों में उपयोग हुआ पानी तो गंदा और विषाक्त होकर ही वापस लौटता है। अतः उद्योगों के भूजल दोहन पर अधिक कठोर नियंत्रण की आवश्यकता है।

हम यह नहीं कहते कि सिंचाई में पानी का अनुशासन न हो। सिंचाई में भी भूजल शोषण नियंत्रित करने की आवश्यकता है, लेकिन इसका नियंत्रण सरकारी अफसरों को सौंपने की बजाय, समाज में आत्मानुशासन को प्रोत्साहित करने वाले कदमों के जरिए किया जाना चाहिए। इसके लिए लोगों को जागरूक किया जाना चाहिए कि लम्बे समय में भूजल शोषण का खेती, पेयजल और नदी पर क्या दुष्प्रभाव पड़ेगा ? समाधान हेतु समुदायों का संगठित होना जरूरी है।

जितना भूजल हम धरती से लेते हैं, कम से कम उतने वर्षा जल का संचयन कर हम धरती से पानी को लेन-देन का संतुलन बना सकते हैं। प्रकृति के साथ उचित व्यवहार का यही कायदा है। अपने फायदे के लिए इस कायदे को भूलने वाले उद्योगों के लिए भी कानूनन् यह जरूरी होना चाहिए कि वे जितना पानी धरती से लेते हैं, उतना और वैसा पानी वापस धरती को लौटायें। तभी नदियों में जरूरी पानी बच सकेगा।

तमाम मौजूद कारणों के बीच से गंगा में प्रचुर जल सुनिश्चित करने के लिए गंगा और उसकी सहायक नदियों की भूमि को हरित क्षेत्र में तब्दील करने की ओर भी कदम बढ़ाने होंगे। क्या गंगा नदी प्राधिकरण इस दृष्टि से सोचना शुरू करेगा?

जनजुड़ाव का अभाव

नियंत्रण छोड़े, कुंभ जोड़े सरकार

जबसे सरकारों ने हमारी हर समस्या का हल अपने हाथ में लेने की बात की है, तभी से हम अपनी जिम्मेदारियों से दूर हुए हैं। हमने मान लिया है कि बस, सड़क, नहर, पहाड़, धरती..... जो कुछ भी हमारा निजी नहीं, उससे हमे कोई लेना-देना नहीं है। उसकी रक्षा सरकार करेगी। नदियां प्रदूषित हों तो हों, उसे ठीक करना सरकार का काम है। इस भावना के पीछे जितना दोष जनता का है, उससे कहीं ज्यादा बड़ा दोष सरकार का है। सरकारें इन सबके बारे में निर्णय करते वक्त न जनता से कुछ पूछती है, न उन्हें शामिल करती है। जैसे चाहती है..... अपना बजट खर्च करती है। गंगा कार्य योजना ने करोड़ों रुपये फूंक दिए हैं। लेकिन कभी जनता से यह जानने की कोशिश नहीं की कि वह अपनी नदी को कैसे देखती है। उसकी भूमिका की तलाश करने की कोशिश कभी नहीं की गई। योजना के कर्णधार भी यह मानते है कि गंगा कार्य योजना में जनजुड़ाव नहीं हो सका। इसलिए करोड़ों फूंक देने के बावजूद गंगा कार्ययोजना सफल नहीं हुई।

स्पष्ट है कि नदी घाटी प्राधिकरण के समक्ष भी जनजुड़ाव एक बड़ी चुनौती है। इस चुनौती से निपटने के लिए प्राधिकरण में सिर्फ कुछ गैर सरकारी सदस्यों को जगह दे देने से जनजुड़ाव नहीं होगा। अलग-अलग अनुकूल तरीकों से लोगों को जोड़ने का तरीका समझना पड़ेगा। जुड़ाव के बिन्दु अलग-अलग इलाकों में अलग-अलग हो सकते हैं। अतः कोई एक तरीका सुझाने की गलती से बचना होगा। जनजुड़ाव हेतु विकेन्द्रीकृत बड़ा तंत्र खड़ा करना एक चुनौती है। यदि हम सचमुच गंगा को राष्ट्रीय मां का दर्जा देना चाहते हैं, तो सबसे पहले राज अपनी जिम्मेदारी को समझकर गंगा के लिए ठीक से नीति-नियम, कानून-कायदे और पालन कराने वाला ढांचा तैयार करे। भारत सरकार ने गंगा प्राधिकरण नाम का ढांचा बनाने की कोशिश की है। इसमें जब राज, समाज और संतों की भागीदारी

बराबर सुनिश्चित होगी, तभी समाज भी गंगा के बारे में अपनी जिम्मेदारी का एहसास करेगा और समाज भी गंगा में गंदगी डालने से रुकेगा। लोगों को मन से गंगा से जुड़ने का एक आंदोलन शुरू कराया जाये। जिस तरह से पश्चिम के लोग कचरा कहीं भी फेंकने वाले को हाथ पकड़कर रोक देते हैं, वैसे ही हम भारतीय भी एक-दूसरे को गंगा में गंदगी फैलाने और गंगा में गिरने वाले नालों को रोकने में एकजुटता दिखायें। गंगा की पवित्रता समाज की एकजुटता से ही संभव है।

आज हम गंगा की पवित्रता की सुरक्षा केवल राज्य के भरोसे नहीं छोड़ सकते। राज, समाज और संत तीनों मिलकर इस जिम्मेदारी को निभायेंगे, तभी गंगा पुनः शुद्ध सदानीरा बनकर पवित्र राष्ट्रीय नदी का सम्मान पा सकती है। कुंभ इस दिशा में रास्ता दिखा सकता हैं। कुंभ और स्नान के दूसरे मौकों का इस दिशा में उपयोग करने की खूबी प्राधिकरण को हासिल करनी होगी।

समाज को चाहिए कि वह हर वर्ष माघ माह में गंगा किनारे इकट्ठे होकर संकल्प ले कि गंगा के साथ अनुशासित व्यवहार करेंगे। गंगा मर्यादा का सम्मान करें। गंगा के साथ दुर्व्यवहार करने वालों को संगठित होकर रोके। छः वर्ष में गंगा किनारे हरिद्वार में हिमालय गंगा की नैसर्गिक प्रवाह की 'गंगा न्याय नीति' बनायें। संगम, इलाहाबाद में जुड़कर गंगा की मैदानी न्याय नीति बनाये। इस प्रक्रिया को अर्द्धकुंभ का नाम दे सकते हैं। इसमें लिए गए निर्णयों को गंगा घाटी प्राधिकरण अपने निर्णय मानकर पालना करेगा, तो भारतीय समाज गंगा से जुड़कर अपनी एकता-अखंडता की रक्षा करने वाली गंगा से स्वतः ही जुड़ जायेगा। कुंभ की अपनी सार्वभौमिकता है। इसका सम्मान करते हुए इस अवसर को गंगा न्याय नीति निर्माण हेतु अच्छा अवसर मानकर गंगा प्राधिकरण भावी योजना बनाये। प्राधिकरण कुंभ को सम्मान देकर गंगा और समाज के सही 'जुड़ाव' हेतु एक व्यावहारिक योजना तैयार करे। जरूरत के मुताबिक कदम उठाएं।

इस मौके पर लोग गंगा में गहरी आस्था के साथ आते हैं। भारतीय मानस पर आस्थाओं का असर ज्यादा होता है। यह आस्था मानव मन को संवेदनशील बनाकर साझे भविष्य को सुधारने में कारगर हो सकती हैं। गंगा जन-जन से जुड़े, तभी स्वच्छ बनेगी। जन को जोड़े बिना गंगा को केवल दण्ड से ठीक करना संभव नहीं है। अत:अब ''जन जोड़ो : गंगा जोड़ो'' का नारा बुलंद हो।

धर्मसत्ता का आदेश
समाज का रास्ता

कैसे लौटे राष्ट्रीय नदी का गौरव?

संत निभायें भूमिका
प्राधिकरण करे पालना

धर्मसत्ता का आदेश

गंगा को बांधों में बांधना अथवा तटबंधों में सीमित करना अत्यन्त अशास्त्रीय एवं धर्मविरुद्ध

जगद्गुरु शंकराचार्य श्रीशारदापीठम् एवम् श्रीज्योतिर्मठ बद्रीकाश्रम

भारतीय मनीषा सदा से ही गंगा को 'मोक्षदायिनी' के रूप में स्वीकार करती आई है। उसके दर्शन मात्र से ही प्राणियों के तीनों ताप स्वतः ही मिट जाते है। यहां तक कि अनेक योजन दूर से भी 'गंगा' कहने से व्यक्ति सर्वतोभावेन शुद्ध हो जाता है। भारत की आत्मा की पहचान गंगा है। यह अत्यन्त आह्लादजनक है कि भारत सरकार ने गंगा को भारत की राष्ट्रीय अस्मिता से जोड़कर इसे राष्ट्रीय नदी घोषित किया है। सरकार की यह घोषणा अत्यन्त स्वागत योग्य है।

धार्मिक ग्रन्थों एवं वैज्ञानिक मन्थनों से यह स्पष्ट है कि गोमुख से गंगासागर तक गंगा की अविरल प्रवाहधारा उसमें अनन्त भौतिक-रासायनिक एवं जैविक गुण उत्पन्न करती है और हिमालय की तलहटी में पनपने वाली अमूल्य औषधियों का संस्पर्श गंगाजल को स्वस्थ जीवन का सबसे बड़ा उपादान बना देता है। अतः प्रत्येक स्तर पर गंगा के अविरल बहाव को अक्षुण्ण बनाए रखना हम सबका कर्त्तव्य है। शास्त्रों में गंगाजल को अपवित्र करने वाले पदार्थ..... यहां तक कि श्लेष्मा, अश्रु एवं अपवित्र अपशिष्ट डालने वालों को नरकगामी कहा गया है। अतः आज की सबसे बड़ी आवश्यकता गंगा को प्रवहमान बनाए रखने,

आधुनिक उपकरणों के माध्यम से बनी जल की कृत्रिम कमी को दूर करने और उसके नैसर्गिक स्वरूप को बनाए रखने की है।

हमारा मानना है कि हम गंगा के ऊपर अनेक बांध, बैराज और टनल बनाकर गंगा के जीवन को समाप्त कर रहे है। शास्त्रों में कहा गया है कि भगीरथ के रथ के खात में चली धारा में ही गंगा की रूढि है। अतः ये अवरोध गंगा की आध्यात्मिक और भौतिक दोनों ही क्षति कर रहे है। गंगा के गांगेय पथ अथवा भगीरथपथ से इतर पथ पर ले जाने से इसका आध्यात्मिक स्वरूप विखंडित हो रहा है और गंगाजल की शुद्धता तो प्रभावित हो ही रही है।

गंगा हिमालय से निकलती है अतः इसे पर्वतराज की पुत्री कहा जाता है। उत्तराखण्ड में भागीरथी गंगा, अलकनन्दा गंगा और मन्दाकिनी गंगा पर बनाए जा रहे बांध ऐसे हैं, मानों कोई पिता अपनी कन्या के गले में ही फंदा डालकर उसे अचेत कर रहा हो। धारा और प्रवाह ही नदियों का जीवन होता है जबकि बाधों का मुख्य उददेश्य ही प्रवाह को रोकना होता है। एतावता यह सिद्ध है कि बांध नदियों के जीवन के सबसे बड़े शत्रु हैं।

शास्त्रों और व्यवहार के अनुसार भी वही जल शुद्ध और पवित्र होता है, जिसका संबंध भूमि और सूर्य से बना रहता है। यही कारण है कि कुओं में हम चारों तरफ से तो सीमेन्ट और ईंट लगाते हैं; परन्तु नीचे तथा ऊपर कोई भी निर्माण नहीं करते हैं। नीचे भूमि से और ऊपर सूर्य से जल का सदैव सम्पर्क बनाए रखना जल की शुद्धता के लिए अत्यन्त अनिवार्य है। यही नियम बावड़ी, तालाब और नदी आदि समस्त जलस्रोतों में अनुवर्तित होता है। गंगा की धारा को मानव निर्माण पर प्रवाहित करना किसी भी दशा में उचित नहीं कहा जा सकता।

यही कारण है कि हम गंगा में बनाए जा रहे बांधों का विरोध करते हैं और सरकार से यह मांग करते हैं कि गंगा पर प्रस्तावित बांधों को निरस्त किया जाए तथा गंगा के राष्ट्रीय नदी घोषित हो जाने के परिप्रेक्ष्य को सामने रखते हुए पुनः गंगानीति बनाई जाए और लम्बित परियोजनाओं का क्रियान्वयन भी तब तक के लिए स्थगित किया जाए।

स्वरूपानन्द सरस्वती

श्री श्री जगद्गुरु शङ्कराचार्य महासंस्थानम्, दक्षिणाम्नाय, श्री शारदापीठम्, शृङ्गेरी

Sri Sri Jagadguru Shankaracharya Mahasamstanan
Dakshinamnaya, Sri Sharada Peetam, Sringeri.

V.R. GOWRI SHANKAR,
CEO & Administrator
Sri Sringeri Math and its Properties, Sringeri - 577 139 (Karnataka - India)

Ref: S-18/ Camp: SRINGERI Date: 29-03-200

Message of Jagadguru Shankaracharya Dakshinamnaya, Sri Sringeri Sharada Peetadeeshwara His Holiness Sri Sri Bharathi Theertha Mahaswamiji

Ganga represents our civilization. Her flow has sustained us for thousands of years. Most ancient civilization on banks of other rivers have disappeared but Indian civilization continues to flourish basically because our forefathers did not disturb the pristine natured flow of Ganga. Believers of Sanatana Dharma have faith in the spiritual power of the Ganga to give salvation

Ganga absorbs penance of the Rishis as She flows freely in the hills of Himalayas from Gomukh, Gangotri and Badrinath to Haridwar and beyond.

It is necessary to keep the flow of Ganga in its natural form. Contact with air, sun, earth and living organisms such as plants, birds and fish should not be restricted. This contact creates the special physical qualities of the Ganga that are essential for Her to be able to get spiritually charged.

The human endeavor must be to use the higher spiritual qualities of the Ganga. Millions of pilgrims get peace by taking bath in the Ganga. Ashes of the departed are immersed in the Ganga. Those who have not taken bath in the Ganga also obtain great solace by knowing that She flows freely. Man's effort should be to enhance the higher qualities of the Ganga and not to undertake any activity that may harm these qualities.

Any human activity that interferes with the flow of Ganga should not be undertaken. This includes discharging of sewage, industrial waste, obstruction of free flow by making of dams, barrages and embankments, etc.,

It is our hope and firm belief that the decision makers of our land give due weightage to the faith and belief of millions of citizens of our country and take only such decisions which in the long term would be beneficial for all the people, not only in making their lives better but also in upholding the age old custom and faith and also help in maintaining the purest quality of our environment and not hamper the nature and its endowments in any way. It is our wish that all God given riches in our mother earth should be preserved, protected and left for all time for the benefit of humanity, the way it is meant to be.

May Goddess Sharada grant the strength and bent of mind to all to work for this.

Statement by His Holiness Jagatguru Sri Nischalanandji, Shankaracharya of Goverdhan Mutt, Puri

His Holinesses welcomes the declaration of Government of India to name Holy Ganga as the National River.

The Ganga gives salvation. She absorbs the negative thoughts of the sinners and then expiates them by the influence of the penance undertaken by Rishis on her banks and that of her tributaries. It is necessary to maintain Ganga in her pristine form so that positive environment for penance is created along her banks. Rishis will hardly do penance on the banks of a dry or polluted Ganga.

The superior physical, chemical and organic qualities arise from rubbing of the waters against stones and their mingling with air especially during flow from Gomukh and Badrinath to Haridwar. Certain curative qualities of Ganga River arise from the presence of medicinal herbs present in the Himalayan ranges. The contact with earth and air in natural form alone creates the spiritual, emotional and aesthetic qualities of the Ganga. This contact is obstructed by making Ganga flow in tunnels, canals and reservoirs.

It is necessary that the physical qualities of waters of the Ganga are kept pure in order that the deeper spiritual qualities are manifest. Such interrelationship is explained in the light of Patanjali's Ashtanga Yoga. Just as eight types of cleanliness are necessary for the soul to rise to Godhead, it is necessary to maintain the physical, chemical and biological qualities of the Ganga in their pristine form to make it possible for her to absorb sin and expiate it.

Absorption of penance of the Rishis requires that 100 percent natural flow of waters of the Ganga should be maintained in this stretch. His Holiness opposes building of dams on the Ganga. New dams should not be built. Dams built earlier should be removed as soon as possible.

His Holiness supports the undertaking of economic activities necessary for the development of the poor and the underprivileged. However, economic development (Artha) should be pursued in a way that it upholds public good and protects the environment (Dharma). The way forward is to develop the

[redacted]

service sector along the banks of the Ganga—schools, hospitals and design centers, etc. which require minimum amounts of energy. Students and patients will gain much by the blessings of the Ganga. In this way economic development, public good and salvation will all be secured. We should not exploit the lower physical qualities of the Ganga such as that using the gradient for the production of hydropower to the detriment of higher emotional and spiritual qualities.

All polluting industries in the catchment areas of Ganga and her tributaries must be removed. The entire catchment area must be declared as a non-polluting 'service sector area'.

Urban sewage treated water must not be discharged in the Ganga. It should be utilized for irrigation. However, it is necessary to first maintain the pristine flow in the hill areas. The Ganga can somewhat remove the downstream pollution if she absorbs the penance in the hills. If the spiritual and natural quality of the Ganga is negated in the hills by diverting her flow through tunnels, canals and reservoirs then her waters will have no spiritual qualities that may be saved from pollution.

A small portion of excess water during the monsoons—when the Ganga is considered Rajaswala (in periods)—may be diverted and stored in other 'off-line' reservoirs for use as drinking water and for irrigation in winter and summer months without ever disturbing the main flow of the Holy River.

Downstream stretches may be dredged, like King Bhagiratha had done in the past, to provide waters to the Hooghly. Human effort must be to increase the flow of the Holy River rather than obstruct it through manmade structures such as like barrages at Haridwar, Bijnor and Farakka.

All embankments made along the Ganga and her tributaries should be removed. Water of the Ganga must be allowed to spread in their natural way and replenish this holy earth. People should be encouraged to live with the difficulties and benefits associated with floods.

सहमति

निश्चलानन्द सरस्वती

५.२.२००८

स्वामी निश्च...

श्रीमज्जगद्गुरु...

गोवर्द्धनमठ.

[redacted]

रास्ता दिखाता समाज

कायदे की परवाह करें, फायदा खुद होगा

उत्पादन में केवल निजी मुनाफा देखने का अंत अच्छा नहीं होता। अंत को सुधारने के लिये उत्पादन को प्रदूषण मुक्त बनाने वाले साधनों का उपयोग करें। जहां समाज अपना साझा और सुंदर भविष्य बनाने का सपना देखता है, वहां सुख, संतोष और शान्ति अपने आप आने लगती है।

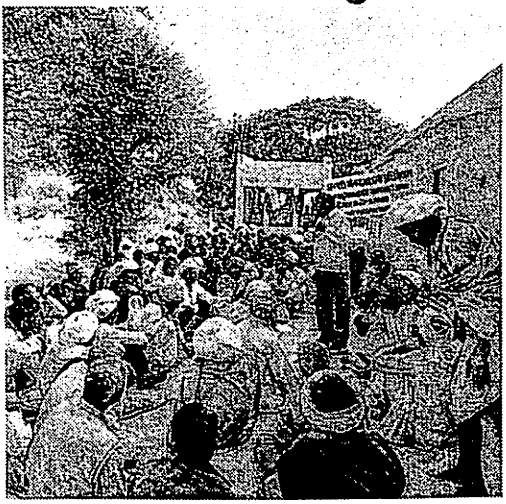

गंगा जलग्रहण क्षेत्र के अलवर जिले का थानागाजी क्षेत्र भूजल अतिशोषण के कारण अस्सी के दशक में 'डार्क-जोन' हो गया था और 84-85 तक आते-आते यहां के ज़्यादातर कुएं सूख गये थे और खेती बन्द हो गयी थी। लोग गांव के गांव छोड़ कर रोजी-रोटी की तलाश में शहरों में पलायन कर गये थे। समाज के दिन फिरे और समाज ने अपने जगह पर टिक कर ही अपनी खुशी और समृद्ध हासिल करने की कोशिश की। मात्र दस वर्ष के बाद 'डार्क जोन' कहलाने वाला क्षेत्र 'व्हाइट-जोन' बन गया। सूखी नदियां सदानीरा बन गई और मवेशी दुधारू हो गए। खेती दो फसली और फसलों का उत्पादन दस गुणा बढ़ा। शहरों में गए ग्रामीण युवा वापस गांव आने लगे। 1995-96 की अतिवृष्टि में भी इस क्षेत्र में बाढ़ से कोई नुकसान नहीं हुआ, बल्कि धरती का भूजल ऊपर आ गया। यहां अब पीने और खेती टिकाए रखने के लिए पर्याप्त पानी है। परिणामस्वरूप सब जगह हरियाली है तथा सुख-शान्ति-समृद्धि दिखाई देती है।

जयपुर के पास नीमी गांव एक समय रेगिस्तान का उजड़ा और वीरान गांव था। काम के लिये अधिकांश लोग जयपुर चले जाते थे। कुएं सूखे पड़े थे। खेती-पशुपालन नहीं के बराबर था। गांववासियों की इज्जत-आबरू सब पर खतरा मंडराता रहता था। इन्होंने अलवर के अपने रिश्तेदारों के गांवों में जनसहयोग से काम होता देखा और वैसा ही अपने गांव में करने का तय कर लिया। 1997 में काम पूरा भी हो गया। सन् 99 में यहां पानी का स्तर 2 मीटर पहुंच गया। जब पर्याप्त पानी हुआ, तो खेती के साथ सब्जी की फसल बोने की बात गांववासियों के मन में आई। सब्जी तो इन्होंने कभी पहले नहीं उगाई थी। इसलिये सब्जी पैदा करने वाले तलाशे गये, जिन्होंने नीमी गांव में पहुंच कर सब्जियां पैदा करना, बिक्री आदि सब कुछ सिखाना शुरू कर दिया।

वर्ष 2000 की गर्मी के दिनों में गांव में बाहर से आकर 750 लोगों ने काम किया। उस वर्ष सूखे में भी यहां तीन करोड़ रुपये की सब्जियां पैदा हुई। गांव की समृद्धि का सपना सच हो गया। प्रसन्नता इस बात की है कि अब पूरे गांव में भरपूर हरियाली है। पहाड़ों पर जंगल उग आये हैं। इस हरियाली की क्रान्ति पूरी दुनिया में छा गई है। जोहान्सबर्ग में उत्तरी-दक्षिणी देशों के सम्मेलन में नीमी को बराबर अच्छे से उल्लेख किया गया। इस गांव से सीखने की बात बराबर कही गई। अब तो शहर के लोगों ने यहां की जमीन करोड़ों में खरीद ली है। पहले इसे कोई कौड़ी के भाव भी नहीं पूछता था। पानी आया, तब पैसा भी आया। बेपानीदार लोग पानीदार और पैसे वाले बन गये। अब इनके पास पानी और पैसा दोनों है। सच है कि आप कायदा न भूलें, कायदा खुद चलकर आपके पास आयेगा।

मैं समझता हूं, आज इससे सीख लेकर गंगा को प्रदूषण मुक्त बनाने का संकल्प लेने की जरुरत है। कायदा यही है कि उद्योगपति अपने उद्योगों को प्रदूषणरहित बनाने का संकल्प लें। समाज गंगा के किनारे सड़कों पर या धरती पर कुछ भी गन्दगी नहीं फैलाये। जहां गन्दगी है, वहां सफाई करें। उद्योगों में भी वायु-जल प्रदूषण मुक्ति के यंत्र लगाकर ही उत्पादन करें। समाज केवल प्रदूषणमुक्त उत्पादनों का ही उपयोग करे। ऐसे आंदोलन की शुरूआत होनी चाहिए। इस आन्दोलन में सरकारी, गैर सरकारी सभी संगठनों को जुड़ने की जरुरत हैं। तय करे कि इस शताब्दी में प्रदूषणमुक्त उत्पाद ही बिकेंगे।

23 दिसम्बर 2002 को शुरू हुई जलसाक्षरता की यात्रा ने देश की सूक्ष्म, छोटी, मझोली और बड़ी कुल मिलाकर 144 जलधाराओं पर होने वाले अतिक्रमण-शोषण-प्रदूषण को रोकने की एक बड़ी मुहिम चलाई थी। नदी जोड़ के स्थान पर नदी से जन जोड़ की बहस चल गई। समाज ने नदियों से जुड़े सवालों पर डरकर बहस की। यह बहस 2006 तक गर्मा गई थी। सरकारी गलियारों में नदी जोड़ को लाल बस्ते में बांधने की बहस चली। अच्छा है कि इस हेतु कोई बजट मंजूर नहीं हुआ। इसके स्थान पर रिवर रिवाइवल, रिवर व्यू डवलपमेन्ट आदि नामों की बात शुरू हुई। इस हेतु विचारपत्र पारित हुए। अंत में गंगा राष्ट्रीय नदी घोषित हुई।

जल बिरादरी ने अब प्रत्येक राज्य में एक-एक नदी को प्रान्तीय नदी का दर्जा देकर नदी संरक्षण कार्य कराने की मांग शुरू कर दी हैं। कई मुख्यमंत्रियों से मिलकर उनसे नदी संरक्षण नीति बनाने की प्रार्थना की और उन्होंने इसमें रूचि भी दिखाई है।

तत्कालीन केन्द्रीय मंत्री श्री अर्जुन सिंह की अध्यक्षता वाला भारत सरकार का कैबिनेट समूह, नई दिल्ली में हमसे 12 नवम्बर, 07 को मिला। घंटों बात हुई और दिल्ली की यमुना का भावी अतिक्रमण रोक दिया गया। प्रधानमंत्री और जल संसाधन मंत्रालय ने नदी संरक्षण और नदी पुनर्जीवन विचार पत्र तैयार कराया। प्रधानमंत्री ने स्वतंत्रता दिवस पर नदियों के विषय में अपनी मंशा प्रकट की। हमारे नदी सम्मेलन में अधिकारी भेजे। गंगा सम्मेलन के निर्णय की कापी मंगाई और उनको लागू करने की प्रतिबद्धता जताई।

हालांकि हमारे देश में प्रदूषण मुक्ति हेतु चले सभी आंदोलनों को बहुत कुछ सहन करना पड़ा है, लेकिन बाद में तो सरकार व समाज सभी ने सराहना की। प्रदूषण फैलाने वाले भी शुरू से ही प्रदूषण निवारण के तरीके अपनाने लग जायें, तो अंततः लाभ पायेंगे। ये लोग पहले की तरह फिर से महाजन कहलाने लगेंगे। उद्योगपतियों को महाजन..... श्रेष्ठि इसलिए कहा जाता था, क्योंकि 2 प्रतिशत मुनाफे से अधिक से परहेज करते थे। आज पुनः उसी परंपरा को जीवित करने की नितांत आवश्यकता है। उत्पादन और व्यापार में लाभ की एक मर्यादा बने। तभी हम शुभ-लाभ के सिद्धान्त को पुनर्जीवित कर सकेंगे। शुभ का अर्थ है-सबका

भला। सबका भला तो प्रदूषण मुक्त परिवेश में ही है। प्रदूषण मुक्त परिवेश में कमाया गया लाभ ही स्थाई लाभ कहला सकता है। दूसरों को कष्ट पहुंचाकर की गई कमाई तो 'कसाई की कमाई' कहलाती है। उसमें भी धन लाभ है, लेकिन शुभ रहित होने के कारण हम इसे लाभ नहीं कहते।

उत्पादनकर्ता को तय करना है, कि उसे महाजन बनना है या कसाई। समाज को भी तय करना होगा कि हमें स्वस्थ रहना है या प्रदूषणकारी परिवेश में बीमार बनकर जीना है। स्वास्थ्यदायी परिवेश तो प्रदूषण मुक्ति से ही संभव है। इस हेतु जागरूक नागरिक बनना जरुरी है। जागरूक नागरिक वही होता है, जो सबको साझा काम मानकर अपने साझा श्रम को सुधारता है। इसलिये महाजन व समाज को मिलाकर प्रदूषण मुक्ति का आंदोलन खड़ा करने की जरूरत है।

लोकतंत्र में लोक ही मालिक है। लोक के कल्याण हेतु ही तंत्र बनाया जाता हैं। आज तंत्र की सांठ-गांठ केवल राज के साथ बन गई है। इसलिये आज हमारे देश में कल्याणकारी लोकतंत्र के नाम पर राजतंत्र ही चल रहा है। इस राजतंत्र को बनाने-चलाने वालों को सब जानते हैं। फिर भी हम सब मौन हैं। जहां कहीं भी मौन टूटता है, वहां भागीरथी-गंगा बचाने जैसी क्रान्ति हो जाती है। हमें अपना मौन तोड़कर सृजनात्मक निर्माण हेतु प्रदूषणमुक्त आंदोलन चलाना है। गंगा को निर्मल-अविरल बनाना है। गंगा प्राधिकरण इसे अपना ही आंदोलन माने। तभी हम गंगा और राष्ट्र की सेहत ठीक रख सकेंगे।

हम जानते हैं कि आज हमारे जीवन को सुखमय बनाने वाले साधन प्रदूषण फैलाकर ही बनते हैं। ऐसा क्यों हो रहा है? न्यूनतम प्रदूषण से भी उत्पादन हो सकता है? लेकिन इसकी चिंता किसे है? किसी पर मंढ़ने से दोष दूर नहीं होते हैं। दोष मिलकर दूर करने पड़ेंगे। जब हम में किसी कष्ट को कम करने का अहसास होने लगता है, तब मुक्ति के उपाय भी स्वतः सूझ जाते हैं।

मुझे याद है कि सरिस्का के जंगलों में मार्बल (संगमरमर) की खदानों के कारण वहां के आदिवासियों, वनवासियों, पशुपालकों सभी का कष्ट बढ़ रहा था। इस कष्ट को कम करने के लिये खुद गांववासियों ने प्रयास शुरू किए। इसी तरह जब

सूखी नदी से सदानीरा बनी अरवरी नदी पर संकट आया, तो गांवों ने मिलकर कुछ अपने नियम-कायदे बनाए। इन कानून-कायदों को साकार रूप देने के लिए 'अरवरी संसद' बनाई गई। इस संसद ने धरती के भू-जल भण्डारों को खाली होने से रोकने के लिए पूरे अरवरी क्षेत्र में गन्ने व धान की बुआई पर रोक लगा दी और तब से इस इलाके में गन्ने और धान की खेती नहीं की जाती है। किसानों के स्वानुशासन से गलत काम रुक गया। अतः प्रदूषण और शोषण दोनों स्वानुशासन से ही रोके जा सकते हैं। ऐसा उद्योगपति भी कर सकते हैं।

प्रदूषण का तो उत्पादन एवम् लाभ-हानि से सीधा संबंध है। कुछ लोग कम लागत में उत्पादन के लाभ की खातिर हुए प्रदूषण पर ध्यान नहीं दे रहे हैं। लेकिन जिम्मेदार समाज व व्यक्ति कभी ऐसा नहीं सोचता। पानी, हवा और परिवेश को दूषित करने वाले तत्व पैदा करके हम प्रकृति को जो देते हैं, उससे प्रकृति दूषित होती है। तब प्रकृति का क्रोध बढ़ता है जिससे सूखा, अकाल, महामारी फैलती है। भूमि की सृजनात्मक उत्पादकता नष्ट हो जाती है तथा धरती का बड़ा भू-भाग अनुत्पादक हो जाता है।

इस प्रकार समाज का एक बड़ा हिस्सा भूखमरी, बीमारी, लाचारी और बेकारी का शिकार हो जाता है। फिर यही समाज अशान्ति व लूट का कारण बनता है। प्रदूषण फैलाने वाला लूट का शिकार बन जाता है। यह वह अंध रास्ता है, जिस पर हम दुनिया के भविष्य को खतरों की ओर धकेल रहे हैं। दुनिया को तबाही से बचाने के लिए हमें लगता है कि प्रदूषण फैलाने वाले व प्रदूषण से प्रभावित दोनों ही अपनी-अपनी भूमिका को समझें और मिलकर धरती और गंगा-भागीरथी को प्रदूषणमुक्त बनाने का संकल्प लें। आइए! आज हम इस दिशा में शुरूआत करें। हमारा साझा भविष्य हमारे संयुक्त कोशिश से ही ठीक हो सकता है। समाज और राज मिलकर प्रदूषण करने वालों का रास्ता रोके। तभी अविरल-निर्मल बनकर गंगा बहती रहेगी। राजस्थान जैसा जल संरक्षण का काम प्रदूषण मुक्ति के काम के साथ-साथ चले। हमें हर हाल में प्रदूषण वाहिनी 'गंगा' को पुनः पुण्यदायिनी 'सुरसरि' बनाना होगा। यही जनाकांक्षा है और जनादेश भी।

संत निभायें भूमिका

पंचसूत्र

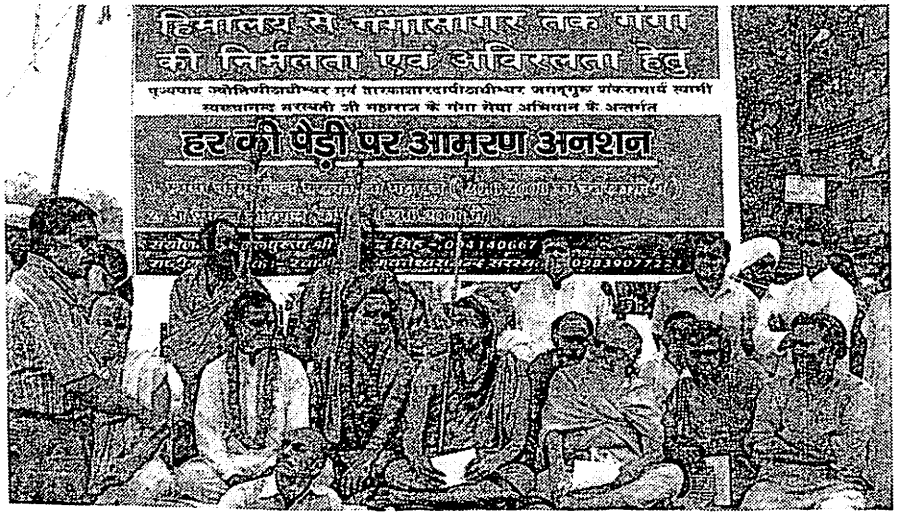

1. सबसे पहले संतों को चाहिए कि वे अपने धार्मिक स्थानों से किसी भी प्रकार का कचरा नदी में न जाने दें। इसकी सख्त निगरानी हो।

2. धर्मगुरुओं व नदी किनारे के सशक्त पंडा समूह प्राकृतिक व जलसंसाधनों के प्रति अच्छे व्यवहार व नीति को भली-भांति समझकर अपने जजमानों व अनुयायियों को उनसे अवगत करायें और उनका पालन करने के लिए प्रेरित व अनुशासित करें। यह तभी संभव होगा कि जब गंगा नदी घाटी में प्रत्येक जलधारा के धर्मगुरु, तीर्थ-पुरोहित इस बाबत गंगा धर्मसंसद को गठित कर नये सिरे से गंगा के प्रति व्यवहार व नीति बनायें और उनकी अनुपालना सुनिश्चित करने के लिए सामाजिक व धार्मिक दण्ड की भी व्यवस्था करें। इस संसद में सभी धर्मों के प्रतिनिधि शामिल होने चाहिए। क्योंकि गंगा किसी एक जाति या धर्म की नहीं है, यह प्रत्येक भारतीय की है।

3. जब सभी धर्म, सम्प्रदाय व समाज के अगुवा मिलकर आम राय से कोई निर्णय करेंगे, तो वह समाज के लिए एक तरह से अघोषित कानून का काम करेगा। गंगा धर्म संसद को विचार करना होगा कि गंगा अब वैसी धारा नहीं बची, जो 22 कि.मी. चलकर अपने भीतर आयी गंदगी को स्वयं साफ करने की क्षमता रखती थी। गंगा के प्रवाह मार्ग में अवरोध खड़े कर दिये गए हैं। जहरीले रसायनों ने गंगा की जीवनदायिनी शक्ति छीन ली है। अतः धर्म संसद नये सिरे से संस्कारों का विधान बनाये। सच कहें तो जब तक हम अपनी नदियों को उनका मूल प्रवाह व मौलिक गुण नहीं लौटा देते, हमें अब उसमें स्नान का भी हक नहीं है। यह प्रायश्चित का दौर है। समाज को यह प्रायश्चित करना ही होगा। इसी मंशा से धर्म संसद को नई व्यवस्था बनानी होगी। धर्म संसद को चाहिए कि वह धार्मिक पूजा, संस्कार..... शवदाह आदि का निर्वाह के लिए कुछ ऐसा स्थान व ऐसी विधि सुनिश्चित करें, ताकि शेष पूजा सामग्री, शवदाह की लकड़ियां, पिंड आदि नदियों में न जाने पाये। एक उपाय यह हो सकता है कि इसके लिए नदियों से थोड़ा अलग हटकर संस्कार स्थल बनाये जाये। सारी क्रियाओं का निर्वाह वहीं हो। इन्हीं संस्कार स्थलों पर नदी कुंड बनाया जाये, जिसमें नदी से लाया पानी ही हो। संस्कार में बची शेष सामग्री के निपटान की व्यवस्था भी वहीं की जानी चाहिए। इन संस्कार स्थलों को प्राकृतिक तौर पर सुन्दर व रमणिक बनाकर लोगों को इनके प्रति आश्वस्त किया जा सकता है।

4. गंगा के प्रति समाज और धार्मिक प्रतिनिधि अपने दायित्व का निर्वाह सुनिश्चित करें। इसके लिए समाज व धर्म के अगुवा लोगों को अपने मठों, मन्दिरों, मस्जिदों और गुरुद्वारों से बाहर निकल कर सामाजिक जुड़ाव के काम में जुटना होगा।

5. संत समाज को चाहिए कि वे जनसमाज के बीच जाकर भू लालच से लेकरे उनमें व्याप्त भ्रष्टाचार और सांस्कृतिक व नैतिक मूल्यों की गिरावट से मुक्त करें। यह बड़ा व आध्यात्मिक सुधार का काम है। यह संत समाज का दायित्व भी है।

गंगा जनादेश

प्राधिकरण करे पालना

1. गंगा हमारे देश की सबसे विशिष्ठ नदी है। गंगा हमारी जीवन धारा है। अब राष्ट्रीय नदी के रूप में गंगा के परिचय, महत्व व इसके प्रति मर्यादा को प्राथमिक से लेकर पूरे देश में उच्चतर माध्यमिक शिक्षा पाठ्यक्रमों में एक अनिवार्य पाठ के रूप में शामिल करने का निर्देश दें। सर्वत्र गंगा शिक्षण (नदी शिक्षण) कार्यक्रम चले। गंगा के राज्य हिन्दी भाषी बहुलता वाले राज्य हैं। अतः मूल प्रारूप हिन्दी में ही तैयार हो। प्राधिकरण की जानकारी स्थानीय भाषा-बोली में भी गंगा प्रकाशित कराकर सबको उपलब्ध कराई जायें।

2. अन्य प्रतीकों की भांति राष्ट्रीय नदी के प्रति सम्मान व व्यवहार में अनुशासन सुनिश्चित करने के लिए कायदे-कानून, कार्य व ढांचागत प्रारूप तैयार करें और उस पर जनसुनवाई व रायशुमारी कर ईमानदारी से जनसहमति लें। राज-समाज को जोड़ने की यही प्रक्रिया है।

3. राष्ट्रीय नदी घोषणा के बाद संसद से जबाब आया था-''प्रदूषण राज्य का विषय है।'' यदि राष्ट्रीय नदी घोषित होने के बावजूद गंगा की स्वच्छता, शुद्धता और पवित्रता केन्द्र और राज्य सरकारों के बीच जवाबदेही के इसे बंटवारे में फंसी रही, तो राष्ट्रीय नदी की घोषणा पर फिर प्रश्न उठेंगे। अतः जरूरी है कि राष्ट्रीय प्रतीकों की श्रेणी में लाने के बाद राष्ट्रीय नदी-गंगा और उसकी सहायक धाराओं से जुड़े पहलुओं को वैधानिक तौर पर राज्यों का नहीं, बल्कि केन्द्र का विषय बनाया जाये। पंचायत, नगरपालिका, राज्य सरकार सब की जिम्मेदारी स्पष्ट तौर पर तय की जायें। ये सभी गंगा व प्राधिकरण के प्रति भी जवाबदेह बने।

4. गंगा और उसकी सहायक नदियों के बाढ़ क्षेत्र (Flood Plain) की पहचान एवं सीमांकन कर उन्हें टाइगर रिजर्व की तर्ज पर गंगा रिजर्व एरिया घोषित तथा संरक्षित किया जाये।

5. गंगा रिजर्व एरिया की सीमा में होने वाली सार्वजनिक महत्व की समस्त गतिविधियां व परियोजनाएं सीधे-सीधे गंगा नदी घाटी प्राधिकरण के नियंत्रण में हो। इसमें किसी अन्य विभाग, आयोग, प्राधिकरण अथवा सरकार का किसी भी परिस्थिति में दखल न हो। यह व्यवस्था किसी राजनीतिक दल अथवा अधिकारी के आने-जाने से प्रभावित न हो। इस संबंध में पक्के कानून बना दिये जायें।

6. गंगा रिजर्व एरिया में नदियों के तट पर होने वाली धार्मिक-सामाजिक गतिविधियों तथा धार्मिक व सार्वजनिक महत्व के परिसरों के संचालन हेतु सरकारी-सामुदायिक-सहभागिता पर आधारित प्रबंधन को लागू करें।

7. कानूनन् यह सुनिश्चित किया जाये कि नदियों के प्रवाह के सर्वोपरि बाढ़ बिन्दु के दोनों ओर गंगा के मामले में 500 मीटर तथा उसकी सहायक नदियों के मामले में 300 मीटर चौडे. क्षेत्र को नदी भूमि (River Bed) मानकर उसे जलसंचयन तथा स्थानीय जैवविविधता के अनुकूल वनस्पति क्षेत्र के रूप में विकसित किया जाये।

8. नदी भूमि क्षेत्र का भू उपयोग प्रत्येक परिस्थिति में सिर्फ और सिर्फ नदियों को समृद्ध करने वाली गतिविधियों के लिए ही हो। नदी भूमि का भू उपयोग किसी भी परिस्थिति में रूपान्तरित व हस्तान्तरित करना अवैध माना जाये।

   पुरातत्व व धार्मिक आस्था की दृष्टि से संवेदनशील पूर्व निर्मित स्थाई निर्माणों को छोड़कर नदी भूमि पर किसी अन्य उपयोग हेतु पूर्व में किये गये रूपान्तरण व हस्तनान्तरण को रद्द कर स्थाई

निर्माण ध्वस्त किये जायें और उस भूमि को प्राकृतिक स्वरूप में लाना सुनिश्चित किया जाये।

भविष्य में नदी भूमि पर तय भू उपयोग के अतिरिक्त किसी भी तरह के इस्तेमाल हेतु नवनिर्माण प्रतिबन्धित हो। चाहे वह निर्माण धार्मिक अथवा सामुदायिक उपयोग के नाम पर ही क्यों न प्रस्तावित हो। साथ ही तय करें कि नदियों का डम्प एरिया के तौर पर इस्तेमाल न हो। नदी भूमि पर किसी भी तरह की स्थाई अथवा अस्थाई व्यावसायिक गतिविधि पूर्णतः निषेध हो।

9. तमाम दावों और प्रयासों के बावजूद किसी भी फैक्ट्री तथा नगरपालिका क्षेत्रों में लगे जल-मल शोधन संयत्रों से निकला पानी ऐसा नहीं पाया गया, जो स्वच्छ हो। सरकारी दस्तावेज स्वयं स्वीकारते हैं कि हमारे मल शोधन संयंत्र मानक गुणवत्ता के दसवें हिस्से की अवजल की निकासी कर रहें हैं। ऐसे पानी का नदी व भूजल में मिलने से गंगा व सहायक नदियों के भीतर जल-जीव-वनस्पति का अस्तित्व ही खतरे में पड़ गया है। इन धाराओं के किनारे रहने वाली आबादी में कैंसर, दमा, किडनी संबंधी विकार, विकलांगता और मृत्यु के शिकार बढ़े हैं। अतः जरूरी है कि किसी भी उद्योग, नगरपालिका, होटल, अन्य उपक्रमों व रिहायशी क्षेत्रों द्वारा उपयोग करने के बाद छोड़ा गया शोधित-अशोधित जल किसी भी प्राकृतिक धारा..... नालों आदि में डालने पर पूर्ण रोक हो।

   मानक स्तर तक शोधन के बाद ऐसे जल-मल को खेती-बागवानी अथवा उद्योगों में पुनः इस्तेमाल के लिए प्रोत्साहन व ढांचागत निर्माण की व्यवस्था हो।

10. प्रदूषकों को आर्थिक रूप से दंडित करने से संबंधित राष्ट्रीय पर्यावरण नीति... निर्देशों के स्थान पर जल, वायु..... पर्यावरण संरक्षण अधिनियम प्रावधानों के अनुसार प्रदूषण के अपराधी को हत्या के मामले जैसी सजा व्यवहार में सुनिश्चित हो।

11. गंगा और उसकी सहायक धाराओं में उसके मूल प्रवाह जैसे रासायनिक-भौतिक गुण और उसे समृद्ध करने वाली जैव विविधता को हासिल करने के लिए जरूरी है कि प्रत्येक नदी धारा विशेष के पारिस्थितिकीय प्रवाह के विशेष मानक तय किये जायें और लोहारी नागपाला पर 16 क्यूमेक्स जल प्रवाह के केन्द्रीय सरकार के निर्णय को न बदला जाये। पूरी गंगा पर न्यूनतम पारिस्थितिकीय प्रवाह के लक्ष्य को हासिल करने का समयबद्ध योजना सुनिश्चित किया जाये।

12. धरती की सतह पर बहने वाली जलधाराएं शरीर में मौजूद नाड़ी तंत्र की तरह होती हैं। कृत्रिम अवरोधों ने गंगा नदी व जल जीवों को तो बीमार किया ही है; उसके आसपास की आबादी, खेती व वनस्पति को भी संकट में दिया है। टिहरी का भूगोल आशंका के घेरे में है। फरक्का बैराज के चलते बिहार का मोकामा-बड़हिया ताल के 1062 वर्ग कि.मी. क्षेत्र की रबी फसल का संकट खतरनाक है। इन अवरोधों पर लगाम लगे।

13. देश में पहले से चल रही सभी निजी व सरकारी पनबिजली व सिंचाई परियोजनाएं जब तक अपने द्वारा मूल रूप से प्रस्तावित उत्पादन लक्ष्य को 100 फीसदी प्राप्त नहीं कर लेती, तब तक नदियों पर किसी नई पनबिजली-सिंचाई परियोजना को मंजूरी न दी जाये। जिन परियोजनाओं को मंजूरी दे दी गई है, लेकिन उनका निर्माण कार्य शुरू नहीं हुआ, अथवा निर्माण प्रारम्भिक दौर में है, ऐसी सभी निजी व सरकारी परियोजनाओं को तत्काल प्रभाव से रोक दिया जाये।

    जलवैज्ञानिकों के साथ मिलकर नीतिगत तौर पर तय करना होगा कि किसी धारा विशेष के पारिस्थितिकीय प्रवाह और जीवंतता को बनाये रखते हुए अधिकतम कितनी बिजली, किन स्थानों पर व किस तकनीकी ढांचे के साथ बनाने की मंजूरी दे सकती है। वर्तमान व भविष्य की प्रत्येक नदी परियोजना में पारिस्थितिकीय प्रवाह की जीवंतता

सुनिश्चित की जाए। पुराने बड़े बांध सरदार सरोवर (नर्मदा), भांखड़ा बांध (व्यास) टिहरी बांध (गंगा) को तोड़कर करके नदियों की आज़ादी पर संवाद शुरू करायें।

14. भारत में तमाम प्राकृतिक संभावनाओं के बावजूद सरकार ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोतों व ऊर्जा के अनुशासित उपयोग को लोकप्रिय बनाने में असफल रही है। इसके लिए समग्र प्रयास, उन्नत उपकरणों की सहज उपलब्धता और प्रचार की आवश्यकता है। देश को तय करना होगा कि उसे अपने उपयोग के लिए न्यूनतम कितनी बिजली चाहिए और तद्नुसार बिजली का अनुशासित उपयोग कैसे सुनिश्चित हो। बिजली की जरूरत व उत्पादन की सीमा तो तय करनी ही होगी।

15. गंगा नदी घाटी क्षेत्र में आजीविका के लिए खेती व प्रकृति पर निर्भरता घटाये बगैर न्यूनतम प्राकृतिक शोषण सुनिश्चित करना संभव नहीं है। अतः सरकार गंगा नदी घाटी क्षेत्र में शिक्षा, परंपरागत कारीगरी तथा सेवा उद्यम संबंधी कौशल-क्षमता-विकास व रोजगार की विशेष ढांचागत परियोजनाएं व पैकेज जारी करें। इसे प्रदूषण रहित तीर्थ-पर्यटन, सूचना व सेवा क्षेत्र के रूप में विकास का स्पेशल रिवर जोन मॉडल स्थापित करे।

16. कई राज्यों ने प्लास्टिक कचरे से तैयार पॉलीथीन थैलियों को प्रतिबन्धित किया है। बावजूद इसके इनका उपयोग धड़ल्ले से हो रहा है। नदियों में आने वाले कचरे में पॉलीथीन कचरा एक खतरनाक अवयव है। सरकार उद्योगों पर प्रतिबंध लगाये और नगरपालिकाओं व पंचायत क्षेत्रों में पॉलीथीन को प्रतिबंधित करे।

17. गंगा में हर वर्ष लगभग 1.15 लाख टन फर्टिलाइजर व कीटनाशक प्रवाहित किये जाते हैं। आज दुनिया में जैविक कृषि उत्पादों की बड़ी मांग है। सरकार कृषि के आधुनिकीकरण को प्रोत्साहित करने के बजाय प्रारम्भिक तौर पर कम से कम गंगा रिजर्व एरिया में तो भारत की

- परंपरागत जैविक खेती, असिंचित खेती तथा पानी की कम खपत वाली फसलों को व्यापक स्तर पर स्वीकार्य बनाने के लिए अपने खजाने खोल दे। वह जैविक तथा परंपरागत उत्पादों के उत्पादन से लेकर उचित मूल्य पर बिक्री तक की एक सुनिश्चित व्यवस्था करे। इस मांग को जनाभियान के तौर पर क्रियान्वित किया जाये।

18. सच्चाई यह है कि अलग-अलग भू सांस्कृतिक क्षेत्र की नदियों को आपस में जोड़ना..... दो भिन्न ब्लड ग्रुप वाले मनुष्यों के खून को एक के शरीर से दूसरे में प्रवाहित कर विकृति पैदा करने जैसा है। इसे समझकर ही स्पेन की सरकार ने अपने यहां प्रस्तावित नदी जोड़ की योजना को निरस्त किया। सोवियत संघ में भी नदी जोड़ योजना पारिस्थितिकीय तंत्र पर पड़ने वाले कुप्रभाव व खारे पानी की समस्या के कारण अरबों रुपया फूंक देने के बाद भी बंद कर देनी पड़ी। इससे सबक लेते हुए प्रधानमंत्री जी को चाहिए कि वह नदी जोड़ परियोजना को तत्काल प्रभाव से निरस्त कर समाज को नदियों से जोड़ने का प्रभावी तंत्र बनाने की पहल करें।

ढांचागत व्यवस्था

1. उपरोक्त कदमों.....नीतिगत निर्णयों के क्रियान्वयन व अनुपालन में जनसहभागिता सुनिश्चित करने के लिए जरूरी है कि प्रस्तावित प्राधिकरण में सरकार के साथ-साथ निजी नहीं, बल्कि समुदाय... समाज व प्रकृति का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो। प्रमाणिक तौर पर हम कह सकते हैं कि निजी क्षेत्र.. निज लाभ के लिए ही काम करता है और राज, समुदाय व प्रकृति सामान्यतः सभी के साझे शुभ के लिए काम करते हैं। अतः गंगा का गौरव लौटाने के लिए भी सरकार... 'सरकार-समुदाय-प्रकृति की सहभागिता पर आधारित प्रबंधन' को लागू करे।

   गंगा प्रवाह के पांच राज्यों के साथ-साथ गंगा बेसिन के अन्य राज्यों तथा गंगा के पानी का सीधे उपयोग करने वाले प्रदेशों के मुख्यमंत्रियों

की भी प्राधिकरण में भागीदारी हो। केन्द्र में संबंधित विभागों के मंत्री भी प्राधिकरण के सदस्य हों।

ऋषि..... प्रकृति का प्रतिनिधि होता है। भारत के चार धामों में से एक..... बद्रीनाथ धाम गंगा की मूल भागीरथी व अलकनन्दा धारा क्षेत्र में स्थित सर्वोपरि तीर्थस्थल है। इसकी मान्यता निर्विवाद है। अतः हम बद्रीनाथ धाम के पूज्य शंकराचार्य अथवा उनके द्वारा नामित व्यक्ति की प्राधिकरण में पदेन सदस्यता हेतु मांग करते है।

2. सामाजिक-पर्यावरणीय संगठनों-संस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने के लिए ऐसे सामाजिक वैज्ञानिक नेतृत्व को प्राधिकरण में बतौर सदस्य शामिल किया जाये, जिनके पास पानी-पर्यावरण की सामाजिक इंजीनियरिंग का जमीनी ज्ञान, जनजुड़ाव का कौशल तथा राष्ट्रीय सरोकार हो।

3. राज्य स्तर पर गंगा के प्रति निष्ठावान सामाजिक-पानी कार्यकर्ता, जल..... जीव, कृषि विशेषज्ञ व आवश्यक रूप से सभी धर्मों के एक-एक प्रतिनिधि, संबंधित हाईकोर्ट का एक जज, एक मीडिया प्रतिनिधि, एक संसद प्रतिनिधि तथा संबंधित मंत्रालयों के अधिकारी व राज्य सरकार के प्रतिनिधियों को शामिल कर गंगा नदी घाटी प्राधिकरण का भी गठन किया जाये।

इनमें हर हाल में गैर सरकारी सदस्यों की संख्या.... सरकारी सदस्यों की संख्या से अधिक हो।

नारी का नीर से गहरा रिश्ता है। अतः अतः हर स्तर पर महिलाओं की सम्मानजनक संख्या में भागीदारी सुनिश्चित हो।

प्रत्येक राज्य में गठित विधिक एकांश को सिविल कोर्ट के अधिकार प्राप्त हो।

4. राज्य की तर्ज पर ही गंगा नदी घाटी के प्रत्येक भू सांस्कृतिक क्षेत्र स्तर पर क्रियान्वयन व निगरानी समूहों का गठन किया जाये। इनमें जमीनी संबंध रखने वाले लोकतांत्रिक संगठनों को अधिक संख्या में सक्रिय एवं जवाबदेह सदस्य के रूप में शामिल किया जाये। ऐसे समूहों का नेतृत्व संयुक्त रूप से एक सरकारी व एक गैर सरकारी प्रतिनिधि के हाथों में हो। गैर सरकारी व सरकारी सदस्यों की संख्या का अनुपात तथा महिलाओं की सम्मानजनक संख्या राज्य इकाई की भांति ही मान्य हो। इन समूहों की इकाइयां प्रखंड व न्याय पंचायत तक हो।

5. भारत ने कभी अपनी नदियों की नीति बनाने व उनके साथ अपने व्यवहार की समीक्षा करने के लिए कुंभ की व्यवस्था बनाई थी। नई परिस्थितियों में गंगा नदी घाटी प्राधिकरण के नियम-नीति व निर्णयों को गंगा व समाज के अनुकूल बनाने, उनका पालन सुनिश्चित करने में सहायता देने तथा गंगा नदी घाटी प्राधिकरण की समीक्षा हेतु सोसायटी पंजीकरण एक्ट के तहत गंगा जन-पंचायत की स्थापना की जाये।

समाज द्वारा चुने गये जनप्रतिनिधि, सामाजिक कार्यकर्ता तथा गंगा प्रवाह के तीर्थ स्थानों के चुनींदा धर्म प्रतिनिधियों को आवश्यक रूप से गंगा जन पंचायत का सदस्य बनाया जाये। पंचायत के कार्योंमें वर्ष में कम से कम दो समीक्षा बैठक कर समीक्षा रिपोर्ट तैयार करने का प्रावधान हो। इसके लिए गंगा जन-पंचायत विशेषज्ञों का सलाहकार मंडल गठित कर सकेगी।

6. गंगा नदी घाटी प्राधिकरण से लेकर जन-पंचायत स्तर तक प्रत्येक स्तर पर आत्म समीक्षा सुनिश्चित करने के लिए अन्तर्समीक्षा समितियां बनाई जाएं।

7. विवाद की स्थिति में त्वरित व निर्णायक कार्रवाई के लिए प्राधिकरण को चाहिए कि वह सर्वोच्च न्यायालय के जज के नेतृत्व में नेशनल रिवर अपील कोर्ट की स्थापना करे।

संलग्नक

पत्र सूचना कार्यालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

प्रेस विज्ञप्ति, 4 नवम्बर, 2008

गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने का निर्णय

गंगा नदी घाटी प्राधिकरण गठित होगा

प्रधानमंत्री की अध्यक्षता में नई दिल्ली में हुई एक बैठक में गंगा को राष्ट्रीय नदी घोषित करने का निर्णय लिया गया। इस बैठक में भारत सरकार के जल संसाधन, पर्यावरण एवं वन तथा शहरी विकास मंत्रियों ने भी भाग लिया। बैठक में गंगा नदी के संरक्षण के लिए योजना, क्रियान्वयन और निगरानी हेतु एक अधिकार प्राप्त संस्था के रूप में गंगा नदी घाटी प्राधिकरण गठित किये जाने का भी निर्णय लिया गया। प्रधानमंत्री इस प्रस्तावित प्राधिकरण के अध्यक्ष होंगे। गंगा प्रवाह के सभी पांचों राज्यों के मंत्री इस प्राधिकरण के सदस्य होंगे।

प्रधानमंत्री ने सभी भारतीयों के दिल और दिमाग में गंगा के लिए एक विशिष्ट स्थान का जिक्र करते हुए कहा कि गंगा के साथ लोगों के भावनात्मक जुड़ाव को मान्यता देने की जरूरत है। इसके लिए देश को चाहिए कि वह नए संस्थागत प्रयासों के जरिए देश में नदी स्वच्छता का एक मॉडल स्थापित करें। इसलिए यह तय किया गया कि आज चुनींदा शहरों में टुकड़ों में हो रहे प्रयासों के स्थान पर एकीकृत दृष्टिकोण लाने की जरूरत है; जो हमारी नदियों को एक पारिस्थितिकीय जरूरत के तौर पर देखे। यह पानी की मात्रा ही नहीं, उसकी गुणवत्ता का भी ध्यान रखे।

प्राधिकरण को दिये जाने वाले अधिकार आदि विवरण को केन्द्रीय मंत्रियों और सम्बन्धित राज्य सरकारों के साथ तय कर लिया जायेगा।

नदी घाटी को इकाई मानते हुए योजना बनाई जायेगी और इसके कार्यो में प्रदूषण नियंत्रण, जल के टिकाऊ उपयोग तथा बाढ़ प्रबन्धन को एकीकृत रूप से शामिल किया जायेगा। नदी के लिए समग्र योजना बनाने के लिए जरूरी समन्वय को बढ़ावा देने का काम भी प्रस्तावित प्राधिकरण करेगा। नदी संरक्षण व प्रदूषण प्रबन्धन के भिन्न पहलुओं पर काम कर रही सभी एजेन्सियों को प्रस्तावित प्राधिकरण के अधीन लाया जायेगा।

प्रधानमंत्री ने यह भी निर्देश दिये कि काफी गहन और जरूरी चर्चा व राय के बाद अगले दो महीने के भीतर अन्तिम प्रस्ताव तैयार कर लिया जाये। उन्होंने यह भी कहा कि 1985 में गंगा कार्य योजना को मूर्त रूप देते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने गंगा की स्वच्छता का एक जनाभियान बनाने की जो मूल भावना जाहिर की थी..... उसे पुनः हासिल करना होगा।

भारत का राजपत्र

असाधारण

भाग II खण्ड 3 उपखण्ड (ii)

प्राधिकार से प्रकाशित सं. 328

पर्यावरण और वन मंत्रालय अधिसूचना

नई दिल्ली, 20 फरवरी, 2009

का.आ. 521 (अ) - गंगा नदी के भौगोलिक, ऐतिहासिक, सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक कारणों से अद्वितीय महत्व की होने के कारण राष्ट्रीय नदी की प्रास्थिति देने के लिए ;

और गंगा नदी तीव्र शहरीकरण और औद्योगीकरण की वजह से मलजल बहिस्राव, व्यापार बहिस्राव और अन्य प्रदूषकों के उत्सर्जन की बढ़ती मात्रा के कारण गंभीर खतरे का सामना करती रही है ;

और, जनसंख्या, शहरीकरण, औद्योगीकरण में वृद्धि और अवसंरचना में वृद्धि के कारण सिंचाई, पेय प्रयोजन, औद्योगिक उपयोग और विद्युत उत्पादन हेतु बढ़ती जा रही नदी जल की मांग और प्रतिस्पर्धी मांगों को पूरा करने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए ;

और, निम्नलिखित करने की अत्यावश्यकता है :-

(क) व्यापक नियोजन और प्रबंधन के लिए अंतर-क्षेत्रीय समन्वय के बढ़ावा हेतु नदी बेसिन दृष्टिकोण अपनाकर गंगा नदी के प्रभावी प्रदूषण उपशमन और संरक्षण को सुनिश्चित करना ; और

(ख) जल की गुणवत्ता सुनिश्चित करने के उददेश्य से गंगा नदी में न्यूतम पारिस्थितिकीय बहाव और पर्यावरण की दृष्टि से सतत विकास बनाए रखना ;

और, गंगा नदी के प्रभावी प्रदूषण उपशमन और संरक्षण के लिए केन्द्रीय और राज्य सरकारों के साझे प्रयासों के सशक्तीकरण के लिए एक नियोजन, वित्त पोषण मॉनिटरी और समन्वयक प्राधिकरण की आवश्यकता है,

अतः अब केन्द्रीय सरकार, पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 (1986 का 29) (जिसे इसमें इसके पश्चात् उक्त अधिनियम कहा गया है) की धारा 3 की उप-धारा (1) और उप-धारा (3) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, गंगा नदी के प्रदूषण का प्रभावी रूप से उपशमन करने और गंगा नदी के संरक्षण के उपाय करने के लिए नीचे उल्लिखित प्राधिकरण का गठन करती है।

1. प्राधिकरण का नाम - इस प्रकार केन्द्रीय सरकार द्वारा गठित प्राधिकरण 'राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण' (जिसे इसमें इसके पश्चात् प्राधिकरण कहा गया है) के नाम से ज्ञात होगा।

2. प्राधिकरण का मुख्यालय :- प्राधिकरण का मुख्यालय नई दिल्ली में होगा।

3. प्राधिकरण का गठन :- प्राधिकरण निम्निलिखित सदस्यों से मिलकर बनेगा, अर्थात :-

(क) प्रधानमंत्री - पदेन अध्यक्ष

(ख) केन्द्रीय पर्यावरण और वन मंत्री - पदेन सदस्य

(ग) केन्द्रीय वित्त मंत्री - पदेन सदस्य

(घ) केन्द्रीय शहरी विकास मंत्री - पदेन सदस्य

(ङ) केन्द्रीय जल संसाधन मंत्री - पदेन सदस्य

(च) केन्द्रीय विद्युत मंत्री - पदेन सदस्य

(छ) केन्द्रीय विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्री - पदेन सदस्य

(ज) उपाध्यक्ष, योजना आयोग - पदेन सदस्य

(झ) मुख्यमंत्री, उत्तराखण्ड - पदेन सदस्य

(ञ) मुख्यमंत्री, उत्तर प्रदेश - पदेन सदस्य

(ट) मुख्यमंत्री, बिहार - पदेन सदस्य

(ठ) मुख्यमंत्री, झारखण्ड - पदेन सदस्य

(ड) मुख्यमंत्री, पश्चिम बंगाल - पदेन सदस्य

(ढ) राज्यमंत्री, पर्यावरण और वन मंत्रालय - पदेन सदस्य

(ण) सचिव, केन्द्रीय पर्यावरण और वन मंत्रालय - पदेन सदस्य सचिव :

परन्तु, प्राधिकरण गंगा की प्रमुख सहायक नदियों वाले राज्यों में से, जिनसे गंगा नदी की जलगुणवत्ता के प्रभावित होने की संभावना है, किसी एक या अधिक मुख्यमंत्रियों को पदेन सदस्य के रूप में सहयोजित कर सकेगा ;

परन्तु, यह और कि प्राधिकरण यथाअपेक्षित, एक या अधिक केन्द्रीय मंत्रियों को पदेन सदस्य के रूप में सहयोजित कर सकेगा ;

परन्तु, यह और भी कि प्राधिकरण ऐसे पांच सदस्यों तक सहयोजित कर सकेगा, जो नदी संरक्षण जल विज्ञान, पर्यावरणीय अभियांत्रिकी, जन-जागरण और ऐसे अन्य क्षेत्रों के विशेषज्ञ हों।

4. प्राधिकरण की शक्तियां और कृत्य :- (1) उपर्युक्त अधिनियम के उपबंधों के अध्यधीन प्राधिकरण को ऐसे सभी उपाय करने और कृत्यों को निष्पादित करने की

शक्ति होगी, जिन्हें वह प्रदूषण के प्रभावी उपशमन और सतत विकास की आवश्यकता के दृष्टिगत गंगा नदी के संरक्षण के लिए आवश्यक अथवा समीचीन समझे।

(2) विशेष रूप से और ऊपर पैरा (1) के उपबंधों की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे उपायों में निम्नलिखित में से सभी या कोई उपाय शामिल होंगे, अर्थात् :-

(क) गंगा नदी की जलगुणवत्ता बनाए रखने और उसमें होने वाले प्रदूषण को रोकने, नियंत्रित करने और उपशमन के उददेश्य से नदी बेसिन प्रबंधन योजना का विकास तथा क्रियाकलापों को विनियमित करना और ऐसे अन्य उपाय करना, जो गंगा बेसिन राज्यों में नदी पारिस्थितिकी और प्रबंधन के लिए सुसंगत हों ;

(ख) जल की गुणवत्ता और पर्यावरण की दृष्टि से सतत विकास सुनिश्चित करने के उददेश्य से गंगा नदी में जल की निरन्तरता के लिए न्यूनतम पारिस्थितिकीय बहाव की अनुरक्षण ;

(ग) पर्यावरण की दृष्टि से सतत नदी संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए मलवहन अवसंरचना, जलागम क्षेत्र उपचार, बाढ़ वाले मैदानों की सुरक्षा, जन जागृति पैदा करना और अन्य ऐसे उपायों के संवर्धन सहित गंगा नदी में प्रदूषण उपशमन के लिए कार्यक्रमों की योजना बनाने, वित्त पोषण करने और निष्पादित करने के लिए आवश्यक उपाय करना ;

(घ) गंगा नदी में पर्यावरणीय प्रदूषण से संबंधित सूचना का संग्रहण, विश्लेषण और प्रसार करना ;

(ड) गंगा नदी के पर्यावरणीय प्रदूषण और संरक्षण की समस्याओं से संबंधित अन्वेषण और अनुसंधान ;

(च) प्राधिकरण में निहित कार्यों के क्रियान्वयन के लिए, यथा उचित, विशेषज्ञ प्रयोजन यानों का सृजन ;

(छ) पुनर्चक्रण और पुनर्प्रयोग, वर्षा जल संचयन और विक्रेन्द्रीकृत मलवहन शोधन प्रणाली सहित जल संरक्षण पद्धति का प्रोन्नयन ;

(ज) गंगा नदी में प्रदूषण निवारण, नियंत्रण और उपशमन के लिए किए जाने वाले विभिन्न कार्यक्रमों अथवा क्रियाकलापों के क्रियान्वयन की मॉनिटरी और समीक्षा ; और

(झ) उक्त अधिनियम की धारा 5 के अधीन उपर्युक्त सभी अथवा किन्हीं कृत्यों के प्रयोग और निष्पादन के प्रयोजन से निदेश जारी करना और ऐसे अन्य उपाय करना, जिन्हें प्राधिकरण अपने उददेश्यों की प्राप्ति के लिए आवश्यक अथवा उचित समझे।

(3) प्राधिकरण की शक्तियां और कृत्य किसी केन्द्रीय अथवा राज्य अधिनियम, जो पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 (1986 का 29) के उपबंधों के असंगत नहीं हों, के अधीन राज्यों को प्रदत्त किसी शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना होंगे।

(4) प्राधिकरण राज्य सरकारें और उनके संस्थानों में निहित शक्तियों को ध्यान में रखते हुए उप-पैरा (1) और उप-पैरा (2) में उल्लिखित, विनियामक और विकासात्मक कार्यों को संयोजित करेगा।

5. प्राधिकरण की बैठकें :- प्राधिकरण अपनी बैठकों सहित अपना कारबार करने के लिए अपनी प्रक्रियाएं विनियमित करेगा।

6. प्राधिकरण की अधिकारिता :- प्राधिकरण की अधिकारिता उन राज्यों जिनसे होकर गंगा नदी बहती है, अर्थात् उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड और पश्चिम बंगाल और ऐसे अन्य राज्यों, जिनमें गंगा नदी की प्रमुख सहायक नदियां हैं और गंगा नदी के प्रभावी प्रदूषण उपशमन और संरक्षण के प्रयोजन से प्राधिकरण जैसा विनिश्चय करे, तक विस्तरित होगा।

7. गंगा नदी का प्रभावी प्रदूषण उपशमन और संरक्षण मानीटर करना :- प्राधिकरण गंगा नदी के प्रभावी प्रदूषण उपशमन और संरक्षण मानीटर करने के लिए अपना स्वयं का तंत्र विकसित करेगा और इस प्रयोजन के लिए उक्त अधिनियम की धारा 5 के अधीन निदेश जारी करेगा।

8. प्राधिकरण का कार्पसः- प्राधिकरण द्वारा यथा विनिश्चित ऐसी परियोजनाओं, कार्यक्रमों और अन्य क्रियाकलापों को क्रियान्वित करने के लिए केन्द्रीय सरकार द्वारा प्रदान किए गए धन का एक कार्पस होगा।

9. प्राधिकरण को प्रशासनिक और तकनीकी समर्थन :- प्राधिकरण को पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, जो कि नोडल मंत्रालय होगा, प्रशासनिक और तकनीकी समर्थन उपलब्ध कराएगा। प्राधिकरण अपने निर्णयों के क्रियान्वयन के लिए एक समुचित तंत्र विकसित करेगा।

10. राज्य नदी संरक्षण प्राधिकरणों का गठन :- संबंधित राज्य सरकारें राज्य स्तर पर गंगा नदी 'संरक्षण' क्रियाकलापों के समन्वय और क्रियान्वयन के लिए मुख्यमंत्री की अध्यक्षता में ऐसे गठन और शक्तियों सहित, जैसा उचित हो, राज्य नदी संरक्षण प्राधिकरण गठित कर सकती हैं।

11. राज्य में व्यापक प्रबंधन :- राष्ट्रीय गंगा नदी बेसिन प्राधिकरण द्वारा तैयार की गई एकीकृत बेसिन प्रबंधन योजना के आधार पर, राज्य सरकारें अपने संबंधित प्राधिकरणों के माध्यम से नदी के व्यापक प्रबंधन के लिए कदम उठाएंगी।

(सं.ए-12011/17/2008-एनआरसीडी-II)
राजीव गौबा, संयुक्त सचिव

19 जून 2008 को उत्तराखण्ड सरकार द्वारा प्रो. गुरुदास अग्रवाल को प्रेषित पत्र

अ.शा. संख्या 140/पी0एस0/कैम्प/2008 दिनांक 19 जून 2008

कृपया अपने पत्र दिनांक 7 जून, 2008 का सन्दर्भ ग्रहण करें, जो कि गंगोत्री से धरासूं तक गंगा नदी के नैसर्गिक प्रवाह को बनाये रखने विषयक है। इसके पूर्व आपने एक पत्र दिनांक 14 अप्रैल, 2008 को भी लिखा था, जिसमें उत्तरकाशी से ऊपर भागीरथी नदी का नैसर्गिक स्वरूप बरकरार न रखने के विरोध स्वरूप आपके द्वारा आमरण अनशन दिनांक 17 जून, 2008 से प्रारम्भ करने की बात कही गयी थी।

गोमुख से उत्तरकाशी के मध्य भागीरथी नदी में तीन विद्युत परियोजनायें निर्माणाधीन प्रस्तावित हैं। इनमें से दो परियोजनाएं, भैरव घाटी '381 मेगावाट' तथा पाला मनेरी '480 मेगावाट' उत्तराखण्ड जल विद्युत निगम द्वारा बनायी जानी प्रस्तावित हैं। तीसरी परियोजना लोहारी नागपाला '600 मेगावाट' केन्द्र सरकार की इकाई–एन.टी.पी.सी. द्वारा निर्मित की जा रही है। पाला मनेरी परियोजना में उत्तराखण्ड जल विद्युत निगम द्वारा लगभग रु. 80 करोड़ का व्यय किया जा चुका है।

इस प्रकार निर्माणाधीन प्रस्तावित तीन परियोजनाओं में से दो के बारे में ही राज्य सरकार निर्णय लेने में सक्षम है। इन परियोजनाओं पर तत्काल प्रभाव से काम रोक दिए जाने का निर्णय राज्य सरकार ने लिया है।

भारत सरकार
विद्युत मंत्रालय
श्रम शक्ति भवन, रफी मार्ग,
नई दिल्ली-११०००१

सत्यमेव जयते

GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF POWER
Shram Shakti Bhawan
Rafi Marg, New Delhi-110001
Fax 2371-7519
Tel.

5th February, 2009

Dear Prof. Agarwal ji,

This has reference to the meeting held with Hon'ble Union Minister of Power, Shri Sushilkumar Shinde, Hon'ble Minister of State, Prime Minister's Office, Shri Prithviraj Chavan, the Secretary, Power, Govt. of India and the CMD, NTPC.

Based on the discussions the following was agreed upon:

1. The minimum flow of water from Lohari Nagpala Barrage in the river bed during the lean period shall be ensured at 16 cumecs or as may be decided by the Ganga River Authority, which is under formation.

2. The Govt. of India confirmed that no further hydro projects shall be undertaken on river Bhagirathi.

Considering the above, you are requested to call off your hunger strike.

With regards,

Yours sincerely,

(D.C. Srivastava)
Director to Govt. of India

Prof. G.D. Agarwal,
Former Professor,
IIT, Kanpur

भारत सरकार
विद्युत मंत्रालय
श्रम शक्ति भवन, रफी मार्ग,
नई दिल्ली-११०००१

GOVERNMENT OF INDIA
MINISTRY OF POWER
Shram Shakti Bhawan,
Rafi Marg, New Delhi-110001
Fax : 2371-7519
Tel. :

19th February, 2009

Dear Prof. Agarwal ji,

This has reference to the two communications dated 19th February, 2009 received from Swami Chidanand Saraswatiji, Shri Rajender Singh, Shri M.C. Mehta, Shri S.K. Gupta, Shri Paritosh Tyagi and Shri Gyanesh Choudhary relating to the work on Loharinag-Pala Barrage Project in District Uttarakashi on Bhagirathi river and discontinuance of fast by your goodself.

The issue was discussed at length between the signatories to the communications and the Hon'ble Minister of Power, Hon'ble Minister of State, Prime Minister's Office, Power Secretary, Government of India and CMD, NTPC.

In continuation of our letter of 5th February, 2009, and in the light of discussions and in response to the request made in the second (part II) communication, it is decided to suspend work on Loharinag-Pala Barrage Project on Bhagirathi river immediately.

As assured in the communication, it is requested that your goodself may kindly discontinue the fast immediately.

With regards,

Yours sincerely,

(D.C. Srivastava)
Director to the Government of India

Prof. G.D. Agarwal,
Former Professor,
IIT, Kanpur

संलग्नक

लेखक परिचय

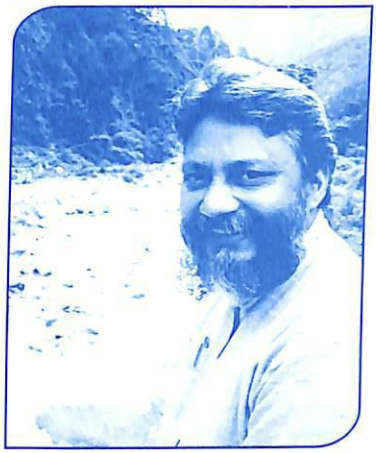

राजस्थान के समाज के साथ मिलकर उसकी श्रमनिष्ठा और समझ से 8,600 से अधिक जल संरचनाओं के सफल निर्माण व प्रबन्धन के परिणामस्वरूप अरवरी, सरसा, भगाणी, रूपारेल, जहाजवाली, महेश्वरा और साबी..... सात नदियों के पुनर्जीवन का गौरव लेखक के हिस्से में है। इस सफलता ने न सिर्फ जोहड़ जैसी देशी जलसंरचनाओं को अंतर्राष्ट्रीय ख्याति दी, बल्कि सदियों के अनुभवों पर जाचे-परखे पानी और पर्यावरण के परम्परागत भारतीय ज्ञान को अंतरराष्ट्रीय मान्यता भी दिलाई। आपका काम व नदी संसद जैसे संगठन इस बात का प्रमाण है कि कैसे जल स्वावलम्बन के जरिये ग्राम स्वावलम्बन हासिल किया जा सकता है।

पानी के संरक्षण के लिए अपना जीवन अर्पण करने तथा एक प्रेरक-शक्ति के रूप में ख्याति के कारण आपको जलपरुष, जलगांधी और जोहड़ वाला बाबा जैसे उपनामों से नवाजा गया। आपको सामुदायिक नेतृत्व विकास के लिए एशिया का नोबेल पुरस्कार कहे जाने वाले 'रमन मैगासायसाय पुरस्कार-2001' से सम्मानित किया गया।

लेखक का विश्वास है कि भारत के परम्परागत ज्ञान व कौशल के जरिये ही हम भारत की नदी, जंगल व प्रकृति की समृद्धि को पुनः हासिल कर सकते हैं। इसी अटल विश्वास के साथ आपने भारतीय राज-समाज को नदी पुनर्जीवन से जोड़ने का बीड़ा उठाया है। यह पुस्तिका इसी दिशा में उठा एक कदम है।

श्री राजेंद्र सिंह.. तरुण भारत संघ एवं राष्ट्रीय जल बिरादरी के अध्यक्ष तथा जगद्गुरु शंकराचार्य स्वामी श्री स्वरूपानन्द जी महाराज की पहल पर गठित 'गंगा सेवा अभियान' के संयोजक हैं।

संपर्क : तरुण आश्रम, भीकमपुरा किशोरी वाया थानागाजी, अलवर(राज.) फोन : 01465-225043

आह्वान

जल बिरादरी

गंगा सेवा अभियान